● कीर्ति-स्मृति ●

(कीर्ति-कथा)

एक क्रान्तिकार की करुणकथा क्रान्तिमय जीवन की

करुणात्मा क्रान्तिकार कीर्तिकुमार

अमरेली-सथरा-लींबडी-उरुलीकांचन पूना-मद्रास-कलकत्ता-हैद्राबाद

स्व. कीर्तिकुमार जमनादास टोलिया

जन्म: 5/4-3-1933 अमरेली (गुजरात)

देहत्याग: 5-11-1959 हैद्राबाद (आंध्र)

आलेखक अग्रज

प्रा. प्रतापकुमार जमनादास टोलिया

अमरेली से पूना

लींबडी

शांतिनिकेतन - हैद्राबाद - अहमदाबाद - हंपी - बेंगलोर

योगीन्द्र युगप्रधान सहजानन्दघन प्रकाशन प्रतिष्ठान

Yogindra Yugapradhan Sahajanandghan Prakashan Pratisthan

वर्धमान भारती इन्टरनेशनल फाउन्डेशन

प्रभात कोम्पलेक्स, के.जी. रोड, बेंगलोर-560009.

'पारुल', 1580, कुमार स्वामी ले आउट, बेंगलोर-560111.

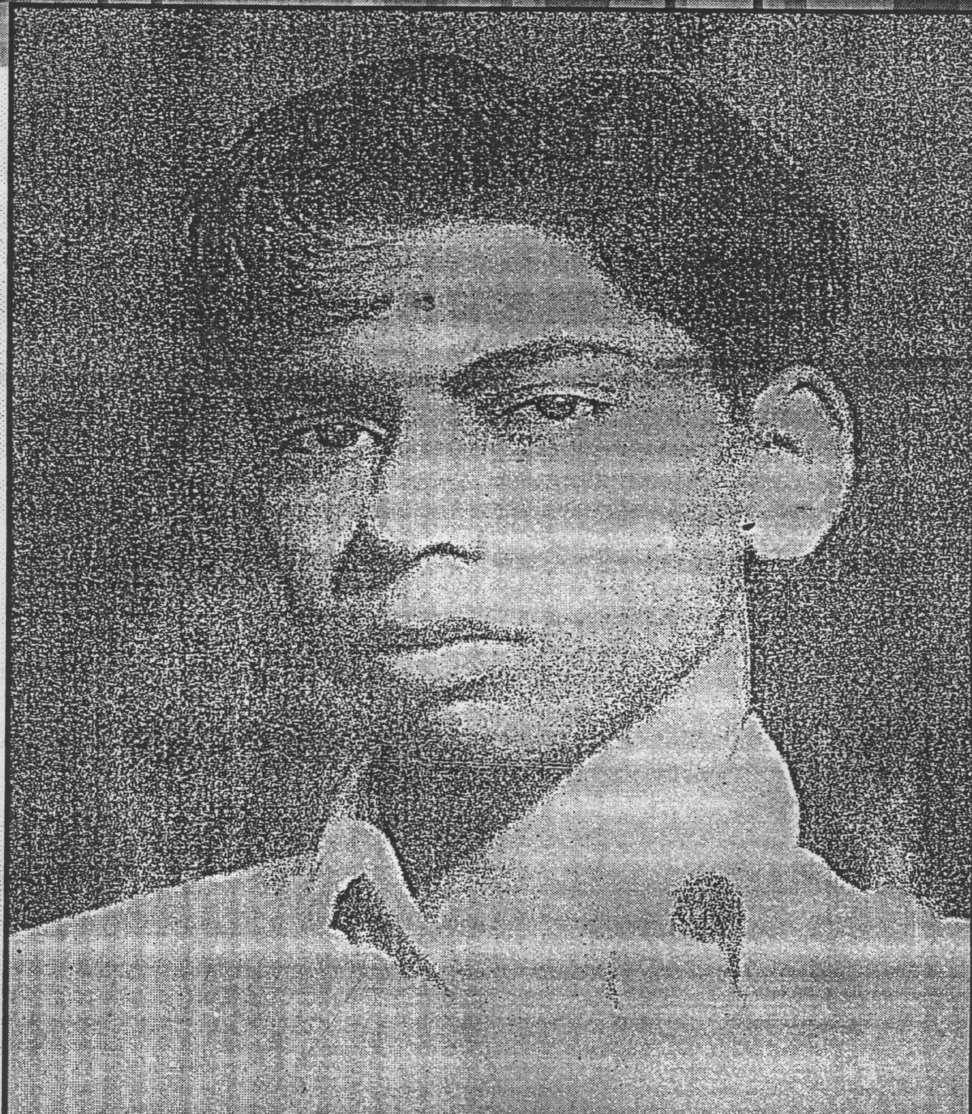

करुणात्मा क्रान्तिकार के
अंतिम शब्द कुटुंबीजनों के प्रतिः
अग्रज के पास प्रतिज्ञा करवाते हुए :

"वादा कीजिये कि मेरे शरीर को चाहे कुछ भी हो जाये तो भी पाप की हिंसक औषधि मुझे नहीं देंगे... मेरे हाथों पाप नहीं करवायेंगे ।"

॥ ॐ ऐं नमः ॥ वीतरागाय नमः ॥
॥ प्रशान्त शान्त क्रान्त आत्मने, परमात्मने नमः ॥

करुणात्म क्रान्तिकार कीर्तिकुमार टोलिया

एक करुणात्मा क्रान्तिकार की करुण कथा

(देह जन्म : 5/4-3-1933 : अमरेली) (देह त्याग : 5-11-1959 : हैद्राबाद)

(अमरेली-सथरा-लींबड़ी-उरुलीकांचन-पूना-मद्रास-कलकत्ता-हैद्राबाद-आंध्रप्रदेश)

"दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य ।
होय मुमुक्षु हृदय में, साधक दशा सुजाग्य ॥" (- श्री आत्मसिद्धि शास्त्र-१३८)

प्राक्कथन

सांप्रत वर्तमान देश काल के भ्रष्टाचार के बीच घटित यह एक करुण हृदय युवा क्रान्तिकार की अनूठी क्रान्तिकथा है जो पुरुषार्थ तो अपार कर चुका, परंतु अपने सपनों को सपने ही छोड़कर असमय ही, छब्बीस वर्ष की युवावस्था में चल बसा.....

सुस्पष्ट जीवनलक्ष्य, सुदृढ़ संकल्प, सतत संघर्षयुक्त स्वमानमय पुरुषार्थ और संनिष्ठ साधना की यह शब्दशः सत्यकथा मेरे अपने ही अनुज की है । उसके इस सत्यखोज और क्रान्तिमय जीवन का यह देहधारी साक्षी भी रहा है, महदंश में सहायक और कहीं कहीं पथदर्शक भी । बंधु होने के कारण किंचित् अपनी कथा भी अनायास, स्वभाविक ही इसमें जुड़ती चली है ।

कथा के पन्ने ही सब कुछ बोलेंगे ।

भले ही यह क्रान्तिकार अपने सपनों का, शहीदों के सपनों का, भारत देख नहीं सका; परंतु अपनी क्रान्तिसाधना को इस काल में दुर्लभ, असम्भव-सी कठोर तपसाधना-पूर्णतः शुद्ध अहिंसा-साधना के साथ भी जोड़ता गया और संसार से अमसय ही विदा हो गया; परंतु उसके लघुजीवन के अंतिम दिन और अंतिम क्षण अहिंसा संस्कार जनित संकल्प और विश्वकल्याणकर नमस्कार महामंत्र की सुदीर्घ श्रवण-धुन के बीच गुज़ार (बीता) गया.... ज्ञानपंचमी के धन्य दिन ऐसे प्रयाण से पूर्व स्वजनों से यह संकल्प करवाकर कि 'अनजाने में भी मेरी देह में हिंसक औषध की एक बूंद भी जा नहीं पाये' — ऐसे अपनी कुछ बेहोशी-पूर्व हृदयभावों के साथ ।

एक क्रान्तिकार, जो अपनी जीवनयात्रा में भ्रष्ट-भारत की भीषण घटनाओं एवं खूंखार गुंडों से एक अबला कुमारिका की रक्षा जैसे प्रसंगों में हिंसक शस्त्र उठाने से भी नहीं हिचका, वह अपने जीवन में तो आद्यान्त अणीशुद्ध अहिंसक बना रहा ! इतना ही नहीं, अपने सबसे निराले ऐसे स्वतंत्र,

स्वयं-आधारित क्रान्तिकार्य में भी उसने जिन जिन साथियों-सहयोगियों तक को भी जोड़ा और परिवर्तित किया उन सब को भी उसने अहिंसक और नीतिमान बनाया । दीनदु:खियों का सही अर्थों में उद्धार किया — अपनी सीमित क्षमताओं और संभावनाओं के बीच ।

उसके ऐसे स्वयं भुक्तभोगी, दरिद्र-केन्द्रित, अहिंसा-आधारित क्रान्तिकार्यों का कुछ पुरस्कार उसे अपने छोटे-से जीवन के जीवनांत में कुछ अज्ञात अदृश्य शक्तियों के जीवनसहायक रूपों में संप्राप्त हुआ ।

ये जीवन - उन्नायक, जीवनोद्धारक, जीवन-ऊर्ध्वीकरण-कारक रूप थे — अंतिम जानलेवा बीमारी के बीच कलकत्ता के मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी के प्राकृतिक चिकित्सालय में दो बार देह छूटने से 'जीवदयाणं'वत् रक्षा करनेवाले रहस्ययोगी और रवीन्द्रनाथ के अंतेवासी गुरुदयाल मल्लिकजी । उनकी अदृश्य परोक्ष सुदूर से सहायता और फिर उन्हींके प्रत्यक्ष समागम रूप में, कीर्ति के हैद्राबाद पहुंचने के पश्चात् स्वयं हैद्राबाद आकर पांच पांच दिनों का पावन सहवास देकर और उसकी आत्मा के ऊर्ध्वीकरण के साक्षात् प्रयोगरूप में और बाद में २३-१०-१९५९ के दिन जिनशासन देवता के प्रत्यक्ष अद्‌भुत प्रसंग के रूप में सहायता अकल्प्य थी ।

रहस्ययोगी मल्लिकजी का योगदान कीर्ति के जीवनांत में जो रहा और उसके जीवन के पश्चात् भी उनके अंग्रेजी पत्रों में जो उनका परिदर्शन रहा, वह सारा तो इस लेखक की अंग्रेजी पुस्तक '**Mystic Mallikji & Krantikar Kirtikumar Toliya**' में विस्तार से अंकित हो रहा है । देवताप्रसंग इस पुस्तक के अंत में यथावत् दिया जा रहा है और कीर्ति का जीवनसंदेश उसके पत्रों के अलावा हमारे अतिमूल्यवान क्रान्ति-प्रसारक नाटक 'जब मुर्दे भी जागते हैं !' में बड़े प्रभावक ढंग से व्यक्त हुआ है — जो कि उसकी मृत्यु के बाद शीघ्र ही लिखा गया था और अहमदाबाद, अमरेली, हैद्राबाद आदि स्थानों पर क्रान्ति की लहर फैलाता हुआ बारह बारह बार मंचित हो चुका था ! उक्त नाटक में क्रान्तिकार कीर्ति की आत्मा भारत की आज़ादी के शहीदों की यह प्रबल आवाज़ प्रस्तुत करती हुई हमारे भीतर प्रतिध्वनि जगाती है, प्रत्येक से वह पूछती है कि — (विशेषकर वर्तमान राजनेताओं से) :-

"क्या यही है हमारे सपनों का भारत ? यह भ्रष्ट भारत-सर्वतोभद्र भ्रष्ट बन चुका भारत ? क्या ऐसे भारत के लिये हमने बलिदान दिया था ?.... अफसोस ! सोचा नहीं था ऐसा भारत हमने सपनों में भी ।"

शहीदों के सपनों का भारत, बापू गांधी के शब्दों में 'मेरे सपनों का भारत', क्रान्तिवीरों का भ्रष्टाचार-मुक्त भारत और अहिंसाधर्मीओं का हिंसाविहीन, कत्लखानों और समग्र प्राणी हिंसा विहीन भारत के नूतन निर्माण में क्रान्तिकार कीर्ति की यह क्रान्तिकथा एवं उपर्युक्त दो कृतियाँ महान निमित्त बनेंगी — अन्य.... आगामी कृतियाँ '**Why Abattoins Abolition ?**" "पुकारते हैं मूकपशु" इत्यादि के साथ, ऐसा हमें विश्वास है ।

सर्वोदय-तीर्थ, करुणा-तीर्थ, अहिंसा-तीर्थ भारत-दृष्टा वीतराग आर्हतों, क्रान्त-पुरुषों, क्रान्ति-पुरुषों का योगबल इन मंगल भावनाओं को परिपूर्ण करो ।

कीर्ति के पचास वर्षोपरान्त,
निज देहजन्म दिन २१-१०-२०१२
"पारुल", १५८०, कुमारस्वामी ले आउट
बेंगलोर-५६०१११ (कर्नाटक)

प्रा. प्रतापकुमार टोलिया
pratapkumartoliya@gmail.com
(M) 09611231580

मंगल भावना

"सत्त्वेषु मैत्रीं, गुणीषु प्रमोदं
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वं
माध्यस्थभावं विपरीत वृत्तौ
सदा ममात्मा विदधातु देव ।"

● बोधि-समाधि-आत्मसिद्धिहेतु सिद्ध भगवंत प्रति प्रार्थना ●

"आरुग्ग, बोहिलाभं, समाहिवर-मुत्तमं दिंतु ।
चंदेसु निम्मलयरा आइच्चेसु अहियं पयासयरा ।
सागरवरगंभीरा सिध्धा सिध्धिं मम दिसंतु ॥
आत्मसिध्धिं मम दिसंतु ॥" (लोगस्स महासूत्र)

॥ शिवमस्तु सर्वजगतः ॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥

REVOLUTIONARY KRANTIKAR KIRTIKUMAR TOLIYA

"Get Born, Be a lustful worldly Creature & Die – This is India's 'NISHKAAM KARMAYOGA!.." – Kirtikumar in a burning Satire.

"Kirti was so sensitive to the Ugly & Unjust in life that he spent all his energies & intelligence in resisting it".

– MYSTIC GURDIAL MALLIKJI : TAGORE & GANDHIJI'S INMATE.

"..... In my heart he has always lived like a bird struggling against the bars of its iron cage and impatiently longing & labouring to be free to fly in the open expansive Sky. Only if we who loved him had been blessed with a vision of his real Self ! We could then have co-operated to the best of our ability with him to realize his ideal. We did not, alas ! understand him truly & so failed to serve him. We can now atone for all this by making ourselves more & more sensitive to the inner aspirations of everyone whom we meet, so that to make his path clearer. Thus, our dear Kirti's work be continued. He has lighted a lamp for us. We have to see to it that it keeps burning bright, whatever be the price we have to pay to ensure this. May God grant all of us the necessary vision, wisdom & Strength ! We shall try our utmost to make dear Kirti live for ever through our Love & Service..... With deepest Love to you all from Gurdial".

..... Mystic Mallikji in a touching and inspiring letter Dated 18-12-1959 from New Delhi after Kirti's Sublime Passing Away unsung from the world on 5-11-1959 at the young Age of 26 at Hyderabad, where he had physically come down to stay with him and elevate for five precious days. This was after spiritually and telepathically saving his life being ended twice at Calcutta's Nature Cure Hospital. Apostle of Love & Compassion Mystic Mallikji had bestowed upon such hidden Mystic helps to all who were suffering & serving humanity, throughout his life. A glimpse of such a noble life is here in this book "MYSTIC MALLIKJI & REVOLUTIONARY KIRTIKUMAR TOLIYA."

प्रकरण-१ Chapter-1

प्रथम प्रयाण का प्रारंभिक दर्शन.....

ज्ञान पंचमी : गुरुवार : 5 नवम्बर 1959 का पावन दिन ।

प्रातःकाल से पंच परमेष्ठी परमगुरु-प्रतीक नमस्कार महामंत्र की अखंड धून चलाई जा रही थी एक धारावत् ।

धूपसुगंध की धूम्रसेर के बीच, इस धून-घोष के मध्य एक क्रान्तिकार करुणात्मा लेटा हुआ था और अपने स्वजनों से, इस दुनिया से, विदा लेने वह सुदीर्घरूप से अंतिम साँसें मिला रहा था । सर उसका अपनी ममतामयी माँ की गोद में था । उसी वत्सल गोद में, जिससे उसने जन्म लिया था, परंतु कितने ही बरसों से अपने क्रान्तिकार्य की धुन में, कहाँ कहाँ अपनी क्रान्तियात्राएँ करता हुआ, दूर दूर बसता रहा था !... महत्पुरुषों की करुणा-कृपा से, कम से कम अपने जीवनांत की इस बेला में, कुछ दिनों से, इस वात्सल्यमयी गोद की छाया में वह आ पाया था — अंत में कालवत् बनी हुई अपनी 'क्रान्ति-कार्य-भूमि कलकत्ता' से हैद्राबाद तक ।

अभी तो आयु ही उसकी क्या थी ? केवल २५-२६ वर्ष ! भर युवावस्था !! पर इस अल्पायु में भी उसने अपनी अल्पशिक्षा के बावजूद महा-महान कार्य संपन्न किये थे !!! — ऐसे महाकष्ट-साध्य 'करेंगे या मरेंगे' के संकल्प से बद्ध विराट क्रान्ति कार्य कि जिनकी कोई केवल कल्पना ही कर सकता है । भारत की आज़ादी के दीवाने ऐसे सारे ही क्रान्तिकारी उसके आदर्श थे, आराध्य थे, देश की क्रान्ति-समृद्धि-खुशहाली रूप दूसरी आज़ादी के आर्षद्रष्टा थे । 'सर्वेऽत्र सुखिनो सन्तु' और 'शिवमस्तु सर्वजगतः' की सर्वोदयी भावनाएँ उसके जीवनमंत्र रूप थीं ।

भारत के उक्त वीर शहीदों की उंगली उसने पकड़ी थीं । उनमें से एक ऐसे भारत-माँ के लाडले लाल शहीद भगतसिंह के अनुगामी-शिष्य ऐसे सरदार पृथ्वीसिंह 'आझ़ाद' — 'स्वामीराव' का तो वह 'प्यारा', प्रेमपात्र, अंतेवासी बन चुका था । फिर भारत में, आझ़ाद परंतु भ्रष्टाचार से भरे भारत में, वह हिंसक क्रान्ति के भी 'उद्धारक-दिखते स्वप्न' निहारने लगा था । सद्‌भाग्य से, इसी समय अपने अग्रज द्वारा इंगित विनोबाजी-बालकोबाजी-जयप्रकाशजी की अहिंसक क्रान्ति के मार्ग की ओर वह मुड़ने लगा । इस क्रान्तिमार्ग में उसकी जन्मजात जैनकुल की अहिंसा और करुणाभावना भी विकसित होने लगी थी ।

जीवन के अनेक घोर भयंकर कष्टों और अग्निपरीक्षापूर्ण अनुभवों के बाद, निष्कर्ष रूप में उसने अपनी करुणामयी क्रान्ति हेतु एक अनोखा मार्ग ही अपनाया था । सरदार पृथ्वीसिंह आझ़ाद के सान्निध्य में जीवन-निर्माणात्मक सथरा-भावनगर-गुजरात के तालीम-वास के पश्चात्, अग्रज के अनुरोध पर उसे क्रान्ति के उच्च मार्ग की खोज की अभीप्सा जगी । इस हेतु नूतन क्रान्ति के युगद्रष्टा आचार्य विनोबाजी के पास अहिंसक क्रान्ति-मार्ग की विशद चिंतना करने उसे

जाना था । इस के पूर्व एक योग बन गया । पूना में अपनी मेट्रिक्युलेशन परीक्षा देकर विनोबा के अनुज संत बालकोबाजी भावे के सान्निध्य में निसर्गोपचार आश्रम, उरुलीकांचन में पर्याप्त वास करने का और अपनी परिश्रम-प्रतिभा दर्शाने का उसे अनायास ही सौभाग्य मिल गया । बाबा विनोबा के अहिंसा-दर्शन एवं सेवा-सर्वोदय-साधना की उसकी यहाँ भूमिका बन गई । इसी बीच अहिंसक क्रान्तिदूत जयप्रकाशजी के भी कार्यों और विचारों ने इस युवान के क्रान्तिशील दिलोदिमाग का कब्ज़ा ले लिया।

आगे चलकर उरुलीकांचन से उसको, परिवार के दबाव-वश अनिच्छा फिर भी, मद्रास जाना पड़ा । परंतु थोड़े-से फिर भी अति कष्टप्रद, कसौटीपूर्ण मद्रास-वास से, अपने जीवन-संकल्प पूर्वक, कलकत्ता जाकर अपने क्रान्तिकार्य का श्रीगणेश कर देने का नियति-योग बन गया । विनोबाजी से मिलने जाने का तो इच्छा होते हुए भी स्थगित हो गया, परंतु तब जयप्रकाशजी की ही, अपने लक्ष्य में दृढ़तर बनी, "फैक्ट्री-दान' की परिकल्पना-योजना उसने एक ओर से, छोटे-से पैमाने पर भी, कलकत्ता में कार्यान्वित कर दी; तो दूसरी ओर से अपने सहभागी-भागीदार-हिस्सेदार बनाये हुए उन गरीब मज़दूरों को अहिंसक, शाकाहारी, निर्व्यसनी, सुशील, समर्पित "क्रान्ति-सैनिक" बनाने की एक निराली जीवन परिवर्तक-प्रक्रिया भी उसने खड़ी कर दी । बड़ी रोमांचक, रोंगटे खड़े कर देनेवाली, रोमहर्षक और प्रेरक दास्तान है यह सारी ।

परंतु यह अनूठी दास्तान इन पन्नों पर आगे बढ़े उसके पूर्व यहाँ इस उदीयमान क्रान्तिकारी के ऐसे प्रतापी, प्रबल पुरुषार्थी क्रान्तदर्शी जीवन का युवावस्था में ही जो असमय, करुण अंजाम-करुणांत-होने जा रहा था और जो करुणतम होते हुए भी अन्य अनेकों का प्रेरणा-पुंज बना था उसका, यहाँ आरंभ किया हुआ प्रसंग-चित्रण संपन्न कर लेंगे ।

उपर्युक्त गंभीर फिर भी जीवन से एक महाप्रस्थान के लिये शुभ, सांकेतिक और पवित्र ऐसे "नमस्कार मंत्र घोष" (कि जिसकी इस क्रान्तिकार ने कलकत्ता में ९ नव दिन तक उपवासपूर्वक पूर्व-साधना की थी) के अनवरत अनुगुंजित प्रवाह के बीच से तब अद्‌भुत घटना घटी... उस गुरुवार के ज्ञानपंचमी के पावनदिन पूर्णातिथि का मध्याह्न व्यतीत हो गया... और इस क्रान्तिकारी करुणात्मा की श्वासगति की धड़कन ठीक २-२५ बजे रुक गई.... ! क्रान्ति-करुणा की ज्योति महाकरुणा में मिल जाने ऊपर उठ गई !!

तब वातावरण और उसके अंतःकरण में अनुगुंजित हो रहा था नवकार महामंत्र का घोष, उसकी छाती पर था उसका प्रिय एक लघु धर्मग्रंथ, माँ की गोद में था उसका मस्तक और उसके अस्तित्व की, आत्मा की, गहराई में थी अहिंसा के पालन के साथ महाप्रस्थान की एक परितृप्ति.... !!!

देह की इस बीमारी के बीच भी उसने अपनी इस अहिंसा की करुणा-दया की लौ सतत, अक्षुण्ण जगाये रखी थी और अभी दो दिन पूर्व ही उसने अपने पूज्य अग्रज से यह वचन ले रखा था कि —

"आप हाथ में पानी लेकर प्रतिज्ञा कीजिये कि चाहे कुछ भी हो जाये, मेरे इस शरीर में हिंसक औषधि की एक बूँद भी नहीं जायेगी । आप यह नहीं जाने देंगे... मेरे हाथों पाप नहीं करवाएंगे ।"

– और बंधुओं से यह वचन लेकर, जो कि उसके अंतिम शब्द थे, अपने शरीर को मानों भिन्न करते हुए 'वोसिराकर', उसे सभी स्वजनों के विवेक पर छोड़कर, वह आज सो गया था सदा के लिये ! योगानुयोग से आजका उसका देहविसर्जन का 'ज्ञानपंचमी' का दिन, उसके इस पूज्य अग्रज का जन्मदिन भी था, जिसने उसकी करुणा-अहिंसा-भावना की यह प्रतिज्ञा पूर्ण करवाई थी और इस संकल्प-पालन एवं नवकार-गान के श्रवण के कारण उसके जीवन का यह करुणान्त भी एक प्रकार की संतुष्टि के साथ हो रहा था ।

अभी कुछ दिन पूर्व ही तो, जैसे उसके जीवनभर के दीन दुःखियों की सेवा के और करुणा के कार्यों की अनुमोदना कर उसे आशीर्वाद देने, शांति-शाता दिलवाने और अपनी भीतरी भावना में सुदृढ़-सुस्थिर करने, हिमाचल प्रदेश जाने के बजाय पांच दिन के लिये पधारकर उसके साथ रहे थे करुणा-प्रेम के अवतार एक ओलिया सत्पुरुष । यह परमउपकारक परमपुरुष थे पूज्य गुरुदयाल मल्लिकजी-गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शांतिनिकेतन के एवं बाद में महात्मा गांधीजी के सेवाग्राम के अंतेवासी । उन्होंने ही तो कीर्ति की सेवा-करुणा की कथा-दयार्द्र कथा सुनकर-जानकर उसकी कलकत्ते की प्राकृतिक चिकित्सालय की डेढ़ माह की अतिगंभीर बीमारी के बीच से दो दो बार मृत्युमुख से बचाकर यहाँ हैद्राबाद पहुँचाया था, माँ और स्वजनों के बीच ढ़ाई ढ़ाई माह के अंतिम काल तक साथ रहने । कलकत्ते में कीर्ति की उनके द्वारा की गई रक्षा, दूर क्षेत्र में रहकर भी - मल्लिकजी के द्वारा की गई एक असम्भव-सी अगम-निगम की रहस्यमयी कथा है । अब वे स्वयं साक्षात् ही उसके पास पधारकर साथ रहे थे, यह कितना उनका उपकार !

"अहो, अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार ।

इस पामर पर प्रभु किया, अहो, अहो उपकार !! (श्रीमद् राजचंद्रजी : आत्मसिद्धिशास्त्र)

"संत परम हितकारी, जगत मांहि संत परम हितकारी" (- ब्रह्मानंद)

ऐसे परम उपकारक, करुणासिंधु सत्पुरुष का जीवनान्त के दिनों में पधारकर सत्संग प्रदान करना और उसके पूर्व कलकत्ते की मृत्युशय्या पर उसे जीवनदान देना यह अद्भुत असम्भव-सी घटना अपने आप में बड़ा मूल्य रखती है और करुणात्मा क्रान्तिकार कीर्तिकुमार के जीवनकार्यों का मूल्यांकन कर उसकी आत्मा को अपने महाप्रयाण के बाद ऊर्ध्वगमन करवाती है ।

परमपुरुष पूज्य मल्लिकजी के उसे और भी बचाने के अनेक प्रयासों के बावजूद भी आख़िर नियति अपना कार्य करती रही और, बेशक जीवनान्त में एक मंगल संतृप्ति के साथ, इस करुणात्मा क्रान्तिकार का, अपने स्वप्नों एवं क्रान्त-दर्शनों का दर्शन कर सके उसके पूर्व ही महाप्रयाण हो गया... ! एक होनहार कली पूर्ण पुष्परूप में विकसित होने से पूर्व ही मुरझा गई !!

कीर्ति की विश्व-विदा के समाचार जानकर सर्वप्रथम प्रेमांजलि आई पूज्य गुरुदयाल मल्लिकजी की, अपने अद्भुत प्रेम-वचनों से परिपूर्ण :

हरिजन आश्रम, अहमदाबाद ११-११-१९५९

"आपका ६-११-५९ का पत्र आज मिला। उसे पढ़कर दिल भर आया। आँखों से आँसू निकल पड़े। प्यारे कीर्ति की बहुत याद आई। वह मुझे अपने प्रेम से स्पर्श करके चला गया! कैसी है यह प्रेम की रीत ?... शायद उसका प्रेम पारस पथ्थर की तरह था, वह हम लोगों को सिर्फ़ छूने ही आया था। अब उसे दिल की गुफा में ही देख सकूंगा, प्रताप! वहाँ से वह नहीं भाग सकता। उसकी उज्जवल आत्मा को मेरा प्रेम प्रणाम। आप सब को प्रभु आश्वासन दे, यह गरीब बंदा ऐसे दुःख में क्या आश्वासन दे सकता है, चिरंजीव ?... आप का सहानुभूति में गुरुदयाल।"

फिर पूज्य बालकोबाजी ने भी उरुलीकांचन से उसकी आत्मा को श्रध्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा :-

उरुलीकांचन, वाया पूना, ११-११-१९५९

"चि. कीर्ति के स्वर्गवास के समाचार बिलकुल ही अनपेक्षित मिले। कीर्ति की माता का तथा आपका दुःख मैं समझ सकता हूँ। परन्तु जन्म और मृत्यु ये दुःख के विषय नहीं हैं। प्रारब्धकर्म जहाँ ख़त्म होता है, वहाँ तुरन्त ही मृत्यु आती है। इसलिये कीर्ति का प्रारब्ध कर्म इस जन्म का पूर्ण हुआ और देह छोड़कर दूसरा जन्म लेकर अधूरा रहा प्रवास पूरा करने का कार्य उसका चालु होगा।

"चि. कीर्ति यहाँ रहा था तब रोज़ हमारे साथ पाखाना (शौचालय) सफाई के लिये नियमित रूप से आता था और उस समय २॥ ढ़ाई घंटे चलनेवाला हमारा सफ़ाई का काम वह पूर्ण करता था। एकबार शौच (मल) अधिक से अधिक संख्या में कौन उठाता है उसकी प्रतियोगिता (स्पर्धा) रखी थी उसमें उसने मेरी स्मृति के मुताबिक ४०० शौच उठाये थे और दूसरा नंबर आया था। आश्रम में रहकर सेवा करने का विचार उसने मुझे बताया था, परंतु मैंने उससे कहा था कि अभी पढ़ाई पूरी कर लो, फिर देखा जायगा।

"उसने कलकत्ते में अपना शरीर घिस डाला। कीर्ति के जो गुण हैं उनका स्मरण कर उसके वियोग के दुःख को बिल्कुल भूलने का प्रयत्न करें।

"मेरी ओर से उसकी माता को सांत्वना दें और आप भी शांति बनाये रखें।"

– बालकोबा भावे

स्व. कीर्ति अहमदाबाद में प्रज्ञाचक्षु पूज्य पंडितश्री सुखलालजी के परिचय में भी आया था। इस परिचय का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा :-

सरित्कुंज, आश्रमरोड, अहमदाबाद-९, दि. १०-११-१९५९

"श्रीयुत् प्रतापभाई, घटित।

पत्र सुना और गहरा दुःख हुआ। इन दिनों जहाँ देखो वहाँ अचानक मृत्यु, रोग, तंगी और ऐसी अनेक प्रकार की विषम स्थिति अनुभव में आती है। उसमें जब किसी परिचित के विषय में कुछ घटित होता है, तब संवेदन को आघात पहुँचता है। कीर्तिकान्त यहाँ आये और उनके मुख से कलकत्ते में उनकी रहनसहन आदि के विषय में सुना था तब मुझे लगा था कि यह तो जीवन जीने के लिये उसका ही क्षय हो रहा है! तुम्हें या उसे मैंने किसी न किसी रूप में मेरा वह असर कह बताया हो ऐसा याद आता है। टायफाइड में एलोपैथिक डोक्टर अनेकबार उल्टासुल्टा ही करते हैं, परन्तु जो बन चुका उसके विषय में अब अधिक सोचने से क्या लाभ ? माताजी को अकल्प्य आघात लगे

यह सहज है । अन्य स्वजन जो आघात अनुभव करें, उससे माता का आघात अलग ही होता है । मातृहृदय ही वह जाने । परंतु तुमने अनेक बार मुझसे कहा था कि माताजी में समझदारी आदि अमुक प्रकार की शक्तियाँ हैं । अतः वे शक्तियाँ ही अभी काम दे सकती हैं । आखिर तो अपनी समझ के बिना, दूसरे का या बाहर का आश्वासन केवल क्षणिक आश्वासन सिद्ध होता है । आप सब कुटुम्बीजन विशेष स्वस्थ रहने का प्रयत्न करें ऐसी अपेक्षा स्वाभाविक ही रहती है ।

— सुखलाल"

सरदार पृथ्वीसिंह आझाद (स्वामीराव) तो, जो कीर्ति के क्रान्तिकारी जीवन के प्रथम निर्माता रहे थे, उसके असामयिक निधन से बड़े दुःखी हो गये । उन्होंने लिखा :

चंडीगढ़, पंजाब, १८-११-१९५९

"मेरे प्यारे भाई प्रतापराय,

जयहिन्द । आपका अशुभ समाचार देनेवाला पत्र मिला ।

मुझे कितना दुःख हुआ है, आप इस का अन्दाज़ा नहीं लगा सकते । मेरा लाडला कीर्तिकुमार मेरे साथ साथ रहना चाहता था, मैं उसे न रख सका । बड़ा होनहार कुमार था वह । मौत तो सब को अपने पंजे में ले लेती है । अकसर युवा काल में भूलों के परिणाम से मौत आती है । मैं फिर आपको दूसरा पत्र लिखूंगा ।

M.L.A. Flats No. 26 आपका शुभचिन्तक,
Sector-3, Chandigarh (Punjab) पृथ्वीसिंह

जिनके समीप अपनी उत्कट अदम्य इच्छा के बावजूद, परिस्थितिवश, कीर्तिकुमार पहुँच नहीं सका था, ऐसे करुणावतार बाबा विनोबा को लिखे गये विस्तृत पत्र के प्रत्युत्तर में बाबाने अपनी लाक्षणिक, संक्षिप्त, सूत्र-शैली में लिखा :-

अज्ञात संचार पंजाब, ३०-१२-१९५९

"प्रतापराय,

पत्र मिला । छोटे भाअी की करुण कहानी पढ़ी । उसमें से आध्यात्मिक सवाल तुम्हें सूझे, उसकी चर्चा पत्र में नहीं करना चाहता । कभी मिलोगे तब चर्चा हो सकेगी । जानेवाला गया, पीछे रहनेवालों को अपना कर्तव्य करना होता है ।

वीनोबा"

इन सभी महत्पुरुषों के उपरान्त स्वजनों, साथियों, मित्रों के अश्रुप्रवाहभरे प्रतिभाव पत्र तो लगातार आते रहे ।

बड़े और छोटे — सभी का इतना प्रेम पानेवाले इस युवा करुणात्मा क्रान्तिकार के लोहचुंबकमय जीवन का रहस्य क्या था ? उसकी निराली कही गई-मानी गई दास्तान क्या थी ?

इस प्रारंभिक दर्शन के पश्चात् अगले प्रकरण में देखेंगे उसके इस चुंबकीय, प्रेरक जीवन का, संक्षेप में भी सही, आद्यान्त दर्शन ।

प्रकरण-२ Chapter-2

बाल्यावस्था और विद्याभ्यास : पितृ-विदा.....

मुझ से तीन वर्ष छोटा मेरा अनुज कीर्ति हम चार बंधुओं एवं एक बहन के परिवार में सब से छोटा था। गुजरात-सौराष्ट्र के अमरेली (बडौदा राज्य) में हमारे माता-पिता के राष्ट्रीयता, स्वातंत्र्य आंदोलन, जैन तात्त्विक अहिंसक संस्कृति, संगीत एवं साहित्य के प्रकाश-प्रभावक वातावरण में हमारा पालन हुआ था। गुरुसम पिताजी जमनादास रामजीभाई टोलिया जन्मजात दार्शनिक तत्त्वचिंतक, साहित्यिक, संगीताभ्यासी एवं समर्पित राष्ट्रवादी थे। हमें पालने में से ही श्रीमद् राजचंद्रजी के एवं अन्य धर्मपदों से संस्कार सींचन करनेवाली दया, ममता, वत्सलता एवं सर्व के प्रति अनुकंपा की साकार मूर्ति माता अचरतबा, सभी से निराली, अति-परिश्रम-निष्ठ एवं सेवाप्रधान नारी थी। प्रातः चार बजे उठकर भजन गाते गाते चक्की पिसती हुई वे हमें नींद से इन सुमधुर स्तवनों-पदों के नैसर्गिक संगीतगान की ध्वनि से उठाती थीं, फिर नदी से बीस-पच्चीस घड़े पानी मुँह-अंधेरे ही भरकर ले आतीं थीं, गायों की सेवा कर दही बिलोने और दूध दोहने के प्रातः कर्म में लगती थीं और दिनभर आगंतुक गरीबों को अपने ममताभरे हाथों से मुफ्त छांछ बाँटती रहती थीं। स्वातंत्र्य आंदोलन के सेनानियों को रोज भोजन कराना और उनकी यात्रा में लौटते समय बाजरे की बड़ी-बड़ी रोटियाँ बांधकर साथ में पाथेय के रूप में बाँध देना यह उनका आनंद का कर्म रहता था !

माँ-बाप के ऐसे दया, सेवा, राष्ट्रधर्म के संस्कारों के बीच हमारा बचपन बीता। इस सुवर्णमय बाल्यावस्था पर तो विस्तृत प्रकरण ही नहीं, पुस्तक ही लिखी जा सकती है, जिसके कुछ अंश मेरी अपनी जीवनयात्रा-वार्ता 'अमरेली से अमरिका तक' में शब्दबद्ध हो रहे हैं। यहाँ तो अनुज कीर्ति के सन्दर्भ में इतना संकेत भर करना आवश्यक है कि परिवार के इस वातावरण से हम दोनों बंधुओं को राष्ट्रीय, जैन एवं सर्वधार्मिक, साहित्यिक एवं संगीत-विषयक संस्कार कूट कूट कर विरासत में मिले। राष्ट्रीय संस्कारों में स्वातंत्र्य आंदोलन के एक छोटे-से केन्द्रवत् बने हुए अमरेली के उस जन्म-गृह पर आते-जाते अनेक स्वतंत्रता-सेनानियों के (१९३०-१९३३ के हमारे जन्मसमय के पश्चात्) दर्शन-संपर्क का सहज लाभ मिलता रहा। इसके अतिरिक्त पिताजी हमें गांधीजी और सुभाष बाबु और बंगाल-पंजाब के अनेक महान क्रान्तिकारों-देशभक्तों की प्रेरक सत्यकथाएँ सुनाते रहे। 'लाल-बाल-पाल' त्रिपुटी, अरविन्द घोष, खुदीराम बोझ, शहीद वीर भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद, सुखराम आदि राष्ट्रवीरों एवं शहीदों के अतिरिक्त गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरदबाबु आदि अनेक बंगला साहित्यकारों का भी हमें परिचय कराते रहे — बंगाल में पिताजी के स्वयं के ही कलकत्ता, बारीसाल जिले के गाँव आदि के व्यापार-वास एवं साहित्यपठन-लेखन-अनुवाद कार्य सह। तो बंगाल के समान ही उनका प्रत्यक्ष सम्पर्क रहा था वतन गुजरात एवं गुजराती साहित्यकारों का। तत्कालीन गुर्जर साहित्यिकार, 'पंडित युग' के सर्वश्री गोवर्धनराम, कवि न्हानालाल, नरसिंहराव, ब.क.ठा., 'कलापी', आदि अनेक तो उनके घनिष्ठ मित्र थे, जिनसे तब चला हुआ सारा मूल्यवान पत्रव्यवहार

अमरेली से अन्य स्थानों के परिवर्तनों में कहीं खो चुका है । इन सभी में अनेक महत्त्व के साहित्यिक एवं राष्ट्रीय गरिमा के विषय भरे हुए थे, जो काल की गर्ता में समा गये हैं, जिसका हम सब को रंजो-गम रहा है । इन साहित्यकारों के बाल्यकाल के हमारे कई संस्मरणों में, घर पर अनेकदा पधारते हुए कवि लेखकों, राष्ट्रनेताओं, संगीतकारों, आदि आदि की बैठकों और महफ़िलों की प्रेरक यादें वैसी-की-वैसी स्मृतिपट पर छाई हुई हैं । मौसेरे भाई एवं सुप्रसिद्ध गुजराती राष्ट्रीय शायर श्री झवेरचंद मेघाणी तो पिताजी से 'कलापी का केकारव' शीर्षक प्रसिद्ध गुर्जरग्रंथ का अध्ययन करते थे, अनेक बार अपने घर पर ठहरते थे और तब उन्हें अपनी बुलन्द आवाज़ में राष्ट्रीय गीतों को ललकारते हुए हमने कई बार सुना था और उनसे ये सब गुनगुनाना हमने सीखा भी था ।

अन्य साहित्य-संगीत सेवियों एवं राष्ट्रसेवकों में, जो तब युवा ही थे, सर्वश्री मोहनलाल महेता 'सोपान', मनुभाई पंचोली 'दर्शक', वजुभाई शाह, मोहन युद्धकवि, रतुभाई अदाणी, आदि कई तो निकट के स्वजन ही बन चुके थे । संगीतकारों में पोरबंदर से अनेकबार आकर घर पर शास्त्रीय संगीत की महफिल जमाते हुए मस्तगायक श्री मल्लभाई और उनका गाया हुआ राग मालकौंस हमारी स्मृति की गहराई में सदा छाये रहे । इन सब का अनेकरंगी प्रभाव, हम दोनों के अंतस्-चित्त पर बना रहा । राष्ट्रीयता के एवं क्रान्ति के संस्कार कीर्ति ने सर्वाधिक पकड़े और आत्मसात् किये । यहाँ तक कि भारत की आज़ादी के सर्व क्रान्तिवीर उसके आदर्श और उपास्य बन गये । उन दिनों के अमरेली से हरिपुरा कांग्रेस में (शायद १९३६ में), धोलेरा सत्याग्रहादि में हम बालकों के भी पिताजी एवं अग्रज बंधुओं के साथ जाने के एवं तत्पश्चात् १९४२ के 'भारत छोड़ो' आंदोलन के अमरेली में देखे हुए प्रेरक क्रान्ति-दृश्य वैसे के वैसे ताज़ा हैं । स्थलसीमा-संकोचवश, कीर्ति की पश्चाद्भूमिका का संकेत करने हेतु, यहाँ इतना निर्देश ही पर्याप्त होगा । प्रारम्भिक शालाकीय शिक्षा दोनों की वहीं हुई ।

१९४५ में हम दोनों बंधुओं का भी, हमारे दूसरे अग्रज एवं सिविल एन्जीनीयर पू. चंदुभाई की नौकरी के कारण, सारे परिवार सह अमरेली से पूना (में) स्थानांतरण हुआ । पूना में फिर अंग्रेजों के विरुद्ध के स्वातंत्र्य-संग्राम के, आगाखान महल में कस्तुरबा-महादेव देसाई की समाधि के बार बार दर्शन के एवं स्वयं गांधीजी के निवासकक्ष पर (डो. दिनशा मेहता के 'नेचर क्योर' में) 'भारत पथक स्काउट के एक स्वयंसेवक' के रूप में गांधीजी की १५ दिन तक (१९४५-१९४६ में शायद) सेवा के महान-लाभ की प्राप्ति के सुवर्णाधिक गौरवपूर्ण विद्यार्थी-काल के संस्मरण हम दोनों बंधुओं की प्रेरणा संपदा-से बन गये । इस विषय में "पूना में पंद्रह दिन बापू के साथ" शीर्षक मेरा अलग लेख है ।

इस विद्यार्थीकाल में पूना से फिर अमरेली और अमरेली से वापस पूना दो बार आना-जाना और पढ़ना हुआ । पूना के गुजराती मिडल स्कुल में कीर्ति का एवं आर.सी.एम. गुजराती हाईस्कूल में मेरा बड़ा स्मरणीय विद्या-काल बीता, जिस में संगीत, चित्र, खेल, व्यायामादि के अतिरिक्त उपर्युक्त गांधीजी-निश्रा सेवा की भी जीवन-निर्णायक शिक्षाएँ प्राप्त हुई । तो अमरेली में पारेख महेता विद्यालय

— जिसका हमने नूतन 'महात्मा गांधी विद्यालय' नाम रखा था — में तो इन संस्कारों का और भी विकास हुआ । साहित्य-संगीत-कला मंडल की एवं 'नूतनप्रभा', 'मुक्ति' आदि हस्तलिखित ग्रंथों की एवं १९४७ आज़ादी दिन १५ अगस्त के पश्चात् गांधी निर्वाण दिन ३० जनवरी १९४८ के प्रसंगों से तो यह विद्यालय हमारी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक प्रवृत्तियों का केन्द्र-सा बन गया । आचार्यश्री मगनलाल मुलाणी, सर्वश्री जादवजीभाई सवाणी (सवाणी बापू), बाबुभाई रावल, भगवानदास निम्बार्क, आदि अनेक सरस्वती-सिद्ध अध्यापकों के नीचे हमारे सारे संस्कारों को पनपने एवं सुदृढ़ होने का बल मिला । कीर्ति की तो क्रान्तिकारों के जीवन-अध्ययन में और मेरे साथ श्री समर्थ व्यायाम मंदिर में शरीरगठन में बड़ी ही गति होती चली । अमरेली की भाँति पूना में भी श्री लालजी गोहिल एवं श्री दादावाले जैसे राष्ट्रवादी अध्यापक एवं श्री नगरकर जैसे चित्रकला अध्यापक ने हम पर अपना अमिट संस्कार-प्रभाव छोड़ा । अमरेली में मेरे १६ वें जन्मदिन पर पू. पिताजी ने एक ताने के साथ मुझे श्रीमद् राजचन्द्रजी की १६ साल की आयु में लिखित "मोक्षमाला" पुस्तक भेंट देकर मुझे मोड़ा था ।

पूना से कुछ काल बम्बई नालासोपारा प्रथम अग्रज पू. जयन्तीभाई के साथ परिस्थितिवश, अनिच्छा होते हुए भी, व्यापार-दुकान लगाना पड़ा, तब भी समीपस्थ तुळींज की पहाड़ियों में हमारा दोनों लघु बंधुओं का साहस-भ्रमण एवं ग्रंथाध्ययन होता रहा । उस पहाड़ी में श्री मणीलाल रेवाशंकर जगजीवन झवेरी का, जो कि बम्बई में गांधीजी के निवास 'मणीभुवन' के मालिक थे, बगीचा था, जिसकी देखभाल अग्रज करते थे और उन्होंने मणीभुवन से "श्रीमद् राजचन्द्र" वचनामृत ग्रंथ हमें लाकर दिया था, जहाँ उस पहाड़ी बगीचे के एकांत में बैठकर हम उसका थोड़ा थोड़ा पठन-लाभ प्राप्त करते थे ।

परंतु उस दुकान-व्यापार-व्यवसाय में हम दोनों लघुबंधुओं का ध्यान लगा नहीं । प्रथम कीर्ति वहाँ से चला गया और पिताजी के पास अमरेली जाकर ठहरा और कुछ काल बाद मैं भी। पिताजीने वहाँ योगनिष्ठ मुनिश्री भुवनविजयजी का सार्थक परिचय करवाया । अमरेली रहकर कुछ समय तक स्वाध्याय के साथ निकटवर्ती लिंबडिया-बरवाला (जामनगर राज्य) की हमारी पैतृक ज़मीनों पर खेती करने की प्रवृत्ति की, वहाँ का सुंदर छोटा-सा घर भी पुनर्निर्मित किया और अमरेली से वहाँ आवागमन करते हुए प्रकृति के बीच कृषक जीवन का भी प्रयोग किया । परंतु पिताजी और हम दो बंधुओं के अतिरिक्त माता आदि सब परिवारजन दोनों अग्रजों के पास नालासोपारा और पूना में होने के कारण भोजनादि पारिवारिक आवश्यकताओं और कुछ पिताजी की अस्वस्थता के कारण यह प्रवृत्ति-प्रयोग अधिक चल नहीं पाया ।

इसी बीच १९५० में मुनिश्री संतबालजी के मेरे पत्राचार-परिचय के पश्चात् उनके द्वारा सुझाये हुए उनके गुरुदेव मुनिश्री नानचंद्रजी महाराज 'संतशिष्य' से भावनगर में मुलाकात के बाद, उनके ग्रंथालय "पूज्यश्री देवचन्द्रजी सार्वजनिक पुस्तकालय" लींबडी (सौराष्ट्र) के 'ग्रंथालयी' - लायब्रेरियन-का मनपसंद कार्य मैंने स्वीकार किया । इससे परिवार के भी कई हेतु सहज ही सिद्ध

होते गये । पू. पिताजी वहाँ आकर मेरे साथ, मुझे सेवा का अवसर प्रदान करने ठहरे, कीर्ति अपनी अधूरी पढ़ाई वहाँ पुनः आरम्भ कर सका (बाद में अग्रज-पुत्र भी !), पू. माताजी वहाँ आकर बसीं और कुछ काल पूना से कच्छ स्थानांतरित हुए अग्रज की पत्नी छोटी भाभी भी । अमरेली के बाद उपकारक मुनिश्री भुवनविजयजी का लींबड़ी में भी समागम हुआ ।

लींबडी के मेरे उपर्युक्त ग्रंथालयी के रूप में कार्य के दौरान मेरी लींबडी के लघु-नगर की सांस्कृतिक-साहित्यिक प्रवृत्तियाँ भी बनती चलीं और सर्वजनों का एवं संस्था-ट्रस्टियों का अपार प्रेम मुझको एवं कीर्ति को प्राप्त हुआ । उदारहृदय पूज्य मुनिश्री, जो कि बार बार वहाँ आते रहते थे, हम दोनों के पुस्तकालय के साथ साथ समाजोपयोगी कार्यों से संतुष्ट होकर हम पर अपनी आशीर्वाद-वर्षा करते रहते थे ।

कीर्तिने अपनी विद्यालयीन शिक्षा के साथ साथ, मेरे ग्रंथालय की अनेक उपयोगी पुस्तकों से अपनी जिज्ञासा-तृषा तृप्त की । उसने विशाल अध्ययन आरम्भ किया । राष्ट्रीय एवं आंतरराष्ट्रीय साहित्य, विशेष कर भारत के स्वातंत्र्य-वीरों को और रुसी एवं चाइनीज़ क्रान्तिकारों स्टेलिन-लेनिन-मार्क्स-माओ सभी को उसने चुन चुन कर पढ़ डाला । राजचन्द्र, विवेकानंद, रामतीर्थ, महात्मा गांधी, सुभाष बाबु, भगतसिंह आदि अनेक महापुरुषों एवं क्रान्तिवीरों की जीवनियाँ भी उसने गहराई से पढ़ीं । मैं उसे इस विकसित होते हुए अध्ययन रस में प्रोत्साहन देता रहा । हमारे बाल्यावस्था के राष्ट्रीयता के संस्कार इससे सुदृढ़ हो रहे थें । कीर्ति ने उक्त अध्ययन के अतिरिक्त अपने सम-प्रकृति के मित्रों का एक क्रान्ति-वर्तुल भी वहाँ बनाया था । वे सभी पुस्तकालय के निकट की भोगावा नदी के सूखे पट पर जाकर चिंतन भी करते और कई खेल-व्यायाम भी ।

इसी बीच भावनगर के निकट सथरा गाँव के सागरतट पर आयोजित होने जा रहे एक युवा क्रान्तिकार तालीम शिबिर की हमें लींबड़ी में सूचना मिली । शहीद वीर भगतसिंह के अनुयायी सरदार पृथ्वीसिंह आझाद, 'स्वामीराव', उसका संचालन करनेवाले थे । कीर्तिने उसमें प्रविष्ट होने के लिये मेरी अनुमति और शिविर-शुल्क एवं अन्य खर्चादि की माँग की । मैंने उसे सहर्ष स्वीकार-प्रदान किया । कीर्ति अपने कुछ मित्रों के साथ बड़े आनंदोत्साह सह वहाँ जा पहुँचा । इस शिविर में उसने अपने समर्पित भाव से न केवल कुछ शारीरिक एवं बौद्धिक शिक्षा-विशेषताएँ पाईं, किन्तु तज्जन्य सारी प्रतियोगिताओं में प्रथम स्थानों की प्राप्ति भी की और सरदार पृथ्वीसिंह का प्रेमपात्र लाडला भी बन गया ! उस शिविर की समाप्ति के बाद भी वह पृथ्वीसिंहजी के साथ रहना और उनके कार्यों-क्रान्तिकार्यों में हाथ बँटाना चाहता था । उसने यंत्र के समान शालाकीय शिक्षा से अपनी रुचि खो दी थी, उसकी भीतरी वृत्ति क्रान्तिकार्यों के लिये ही तैयार हो गई थी और सरदार पृथ्वीसिंह के प्रति भी हमारे परिवारजनों का समादर बढ़ा था, इसलिये हम सभी ने कीर्ति को उनके साथ भेजना स्वीकार किया । परन्तु उस समय स्वयं पृथ्वीसिंहजी के ही अन्य कार्यों की अग्रताएँ एवं मर्यादाएँ थीं इसलिये तत्काल वे उसे साथ नहीं ले जा सके, फिर भी पत्रव्यवहार से कीर्ति को वे आगे मार्गदर्शन देते रहे और कीर्ति भी अपनी व्यायामादि प्रवृत्तियों, क्रान्ति-वर्तुल-बैठकों और ग्रंथालय-पुस्तकों के अध्ययन

में लगा रहा ।

इ.स. १९५२-५३ का यह समय था । उस समय पिताजी ने लींबड़ी से अमरेली जन्मभूमि पर जाने की इच्छा व्यक्त की, आटकोट होते हुए वे अमरेली पहुँचे और वहाँ शय्यावश हो गये । पिताजी की ऐसी स्थिति के समाचार जानकर, मैं और माताजी उनकी सेवा में वहाँ पहुँचे-लींबड़ी ग्रंथालय से छुट्टी लेकर और ग्रंथालय-कार्य में बाधा न हो इस हेतु से कीर्ति को अपने स्थान की जिम्मेदारी सौंपकर । किसी भी कार्य में दक्ष और संनिष्ठ कीर्ति ने यह कार्य भी इतनी बखूबी निभाया कि ग्रंथालय-संस्थापक मुनिश्री नानचंद्रजी उससे बड़े प्रसन्न हुए और उसे आशिष-बल प्रदान करते रहे । परंतु अमरेली में अंतिम दिन व्यतीत कर रहे पूज्य पिताजी ने ९ जुन १९५२ को शांति-समाधिपूर्वक, माँ और मेरी सेवा पाकर, जब देहत्याग किया, तब कीर्ति को अपने प्यारे पिताजी से उस 'कीर्तिनिवास' में अल्विदा कहने भी आगे से बुला नहीं सकने का दुःख मुझे रह गया । कीर्ति ने तो लींबडी की मेरी लायब्रेरी-सेवा सम्हालकर हमारे महान तत्त्वज्ञ पिता की सेवा करने का मुझे अवसर प्रदान कर दिया, परन्तु मेरा यह अक्षम्य अपराध रहा कि मैंने समयसूचकता नहीं दर्शाते हुए उसे पितृ-मिलन से अंतिम विदा की बेला में भी वंचित रख दिया !! बेचारा कीर्ति, जिसके प्रति अपार वत्सल-प्रेम से ही पिताजी ने हमारे इस गृह का उसका ही नामाभिधान किया था 'कीर्तिनिवास' और जहाँ से और जिनसे उसने अपने क्रान्ति-कार्य के प्रथम पाठ पढ़े थे, वहाँ वह मेरे उक्त प्रमादापराध के कारण, महाप्रयाण कर रहे पिताजी को प्रणाम भी करने, प्रत्यक्ष पहुँच नहीं पाया था !!! बेशक परोक्ष होकर भी वह दूसरे रूप से तो उनके निकट प्रत्यक्ष ही रहा था ।

लींबड़ी में १९५४ तक उक्त ग्रंथालय कार्य, सभी का अपार प्रेम संपादन करते हुए सम्हालकर, हम दोनों बंधुओं को, फिर अनिच्छा से, अपने जीजा श्री पी.जे. उदानी और दोनों अग्रजों के आग्रह से, उनके उदानी एन्जीनीयरींग कंपनी के परिवार-व्यवसाय में जुड़ने और आगे अध्ययन करने, त्यागपत्र देकर लींबड़ी से जाना पड़ा - मुझे हैद्राबाद (आंध्र) और कीर्ति को मद्रास, जहाँ से वह पूना अपनी मेट्रीक्युलेशन परीक्षा देने गया और फिर उरुलीकांचन पू. बालकोबाजी के पास ।

प्रकरण-३ Chapter-3

क्रान्तिकार्यार्थ कलकत्ता की ओर.....

लींबड़ी का कार्य छुड़वाने के पीछे हमारी पू.माँ की भी, कुछ बिना विवेक और कुछ बड़ों के दबाव के कारण, भावना बनी थी। हम दोनों अनुजों ने मातृभक्तिवश वह विवशता से स्वीकार की थी। फिर भी एक स्पष्टतापूर्ण शर्त रखी थी कि हम दोनों को अपना अपना विद्याध्ययन आगे बढ़ाने दिया जाय — कीर्ति को मेट्रिक्युलेशन का और मुझ को ग्रेज्युएशन का। इसीके दौरान मुझे भारतभर के आध्यात्मिक केन्द्रों-आश्रमों, संतों आदि के सत्संग-दर्शन-प्रवास करने थे, सो संपन्न हुए और अंत में आचार्य विनोबाजी सह उड़ीसा से लेकर अनेक-प्रदेशों की पदयात्राओं में चलते रहे।

कीर्ति का, तब प्रारम्भ में ही कहे अनुसार उरुलीकांचन में बालकोबाजी के पास रहना हुआ — अनेक जीवन-निर्माण के लाभों को प्राप्त करते हुए वहाँ शरीर परिश्रम, ग्रामसफाई, निसर्गोपचार शिक्षा, राष्ट्रीय धाराओं एवं क्रान्तिकार्यों का चिंतन, जे.पी. की संपूर्ण क्रान्ति एवं विनोबाजी की रामराज्य-ग्रामराज्य-सर्वोदय क्रान्ति सभी का अध्ययन हुआ। उसे स्वयं विनोबाजी के पास जाकर प्रत्यक्ष चर्चा करने की छटपटाहट जगी। मैंने बाबा की पदयात्राओं में रहकर दूर से उसकी आयोजना एवं पूर्वव्यवस्था भी की, परन्तु बड़े ही बदनसीब से, इस बीच जीजा एवं उनके पाशवी वृत्ति के शोषक पूंजीपति बंधु के भ्रष्टाचारी कारनामों में कीर्ति जैसे होनहार क्रान्तिकार को मद्रास बुलाकर फँसाने का, उन दोनों द्वारा षड़यंत्र रचा गया, जब कि मैं सुदूर बाबा की पदयात्राओं में था। यात्रा में देरी से समाचार मिलने पर मैंने जीजाजी को तार और पत्र भेजकर उनकी इस चाल का विरोध किया। दोनों अग्रजों को भी लिखा। जीजा ने पहले भी उनकी इस चाल का संकेत देने पर मैंने स्पष्ट विरोध दर्शाया था।

परन्तु प्रथम तो कुछ समय तक उदानी बंधुओं ने कीर्ति जैसे क्रान्ति के लिये मुक्त गगन में उड़ने पर फरफराने के लिए समर्थ पंछी को अपनी जाल में फँसाने की कुचेष्टा की, परन्तु वह कहाँ उसमें फँसा रहनेवाला था ? इस प्राथमिक कुचेष्टा में उन्होंने कीर्ति के "हितैषी" होने का नाटक कर के न केवल हमारी बहन और मद्रास में उनके पास नौकरी कर रहे सरलात्मा अग्रज चंदुभाई को, किन्तु हमारी भोली माँ को भी भरमाये रखा !

पर कितनी कुटिल, कितनी भयंकर और कितनी भ्रष्टाचारपूर्ण थी इन भ्रष्ट सम्बन्धीजनों (?) की षड़यंत्र भरी चाल ! कीर्ति जैसे शरीर से सशक्त और बुद्धि से तज्ज्ञ युवक के हाथों पता है वे क्या करवाना चाहते थे ? उसे ६०/- साठ रुपये प्रतिमाह का वैतनिक 'सुपरवाइज़र' बनाकर

उसके द्वारा रात के अंधेरे के काले बाज़ार में छोटे उदानीने अपने कॉन्ट्रेक्ट कार्य में मिलिट्री एन्जीनीयरींग सर्विस (MES) से चुराये हुए इलैक्ट्रीक वायरों को चुपचाप बिकवाते रहने का भ्रष्टाचारी दुष्ट आयोजन कर रखा था ! फिर अनपढ़ गरीब मज़दूरों को एक रुपया मज़दूरी चुकाकर बीस रुपये के रसीद-वाउचर पर नये "सुपरवाईज़र" के द्वारा अंगुठा लगवाना चाहा था – एक दो नहीं, सैंकड़ों मज़दूरों के पास से !! क्या कीर्ति जैसा विद्रोही और नेक क्रान्तिकार युवक कभी भी ऐसे कार्यों में सम्मत हो सकता था ? प्रथम दो दिनों में ही अपने पूंजीपति भ्रष्ट शोषक – 'स्वजन' (?) जीजा-बंधु के ऐसे कुचक्रों का पता लगते ही कीर्ति के भीतर-बैठा हुआ देशभक्त विद्रोही सुलग उठा । उसने न केवल मुँहतोड़ विरोध किया इस भ्रष्ट 'स्वजन' (!) का, अपितु पुलिस शिकायत भी कर दी ! परन्तु भ्रष्ट पूंजीपति से माल खाई हुई भ्रष्टाचारी पुलिस उसके विरुद्ध क्या करनेवाली थी ? मद्रास की पुलिस की इस मिलीभगत एवं निष्क्रीयता से क्रान्तिकार कीर्ति आगबबूला हो गया । उसका हिंसक विद्रोही भीतर से जाग उठ खड़ा हुआ..... ऐसे देशद्रोही, बेईमान, शोषक, भ्रष्टाचारी 'स्वजन' (!) का खून भी कर डालने में उसे कोई पाप नहीं दिखाई दिया.... उसने अपनी यह मन्शा मद्रास रहे अग्रज से एवं माँ से भी छिपाई नहीं । चिंतित होकर उन्होंने विनोबा यात्राओं में घूम रहे मुझको किसी तरह टेलिग्रामों और एक्सप्रेस पत्रों से सारे समाचार पहुंचाये । कीर्ति ने भी अपनी अंतर्व्यथा किसी प्रकार मुझे पहुंचायी । साथ में उसने यह भी पूछवाया कि क्या वह कलकत्ता चला जा सकता है और वहाँ रह रहे मेरे समर्पित संनिष्ठ मित्र मनुभाई उसके धन कमाने के कार्य और स्वतंत्र क्रान्ति-कार्य की भूमिका बनवाने में उपयोगी हो सकते हैं ?

सारी परिस्थिति का दूर से दीर्घचिंतन कर, उस समय उसे कलकत्ता जाने देना ही मैंने उचित समझा । कलकत्ता के मित्र को शीघ्र सूचना दी । कीर्ति को मद्रास में भ्रष्ट स्वजन के प्रति भी हिंसक कदम उठाने से मैंने रोका और उसे तुरन्त कलकत्ता चले जाने की अनुमति दी । कलकत्ते के बड़े ही उदारहृदय मित्र मनुभाई ने शीघ्र ही कीर्ति हेतु सहर्ष सारी पूर्वव्यवस्था की, उसे मद्रास टेलिग्राम भेजकर निमंत्रण दिया और कीर्ति जल्दी ही उनके पास कलकत्ता पहुँच गया ।

इस प्रकार मद्रास की चुनौतीभरी प्रत्यक्ष घटना ने कीर्ति की हृदयस्थ क्रान्ति-भावना को और बढ़ाकर बल दिया और देशभक्त बंगाली क्रान्तिकारों की क्रान्ति-नगरी कलकत्ता में जाकर अपने क्रान्ति कार्य को साकार करने का सहज अनायास ही निमित्त बन गया । उसका लक्ष्य था प्रथम स्वयं धनार्जन करना और फिर क्रान्तिकार्य ।

इस समय हैदराबाद आ कर मुझे अपनी प्रामाणिक व्यवसाय व्यवहार एवं अध्ययन-स्वातंत्र्य की शर्तों के साथ पूर्वायोजित उदानी एन्जीनीयरींग कंपनी में अग्रज चंदुभाई एवं बहन शांताबेन उदानी के साथ भागीदार के रूप में सावधानीपूर्वक जुड़ना था । ये सारी औपचारिकताएँ संपन्न कर कीर्ति के पास कलकत्ता जाने का, उसका नूतन क्रान्ति-कार्य आरम्भ होने से पूर्व उसे दीर्घ-लंबित विनोबाजी

के पास ले जाने का एवं सुचारु रूप से सारी व्यवस्था करवाने का विचार किया । इस सारी प्रक्रिया में थोड़ा समय लग गया और इसी बीच कलकत्ता में अतिथि-वत्सल मनुभाई के घर रहकर कीर्ति ने भी अपनी सेवा भावना एवं निस्पृह साधक-वृत्ति से उनका और उनके सारे परिवार का दिल जीत लिया । मनुभाई के अति आग्रह जताने पर भी अपने नये क्रान्ति-कार्य धनार्जन व्यवसाय कार्य हेतु उनसे उसने कोई धन नहीं लिया । कष्ट होते हुए भी वह अपनी "जात मेहनत" से कलकत्ते में पैर जमाने के प्राथमिक कार्य में प्रामाणिकता और परिश्रमपूर्वक जुटा रहा ।

अनेक कार्यों और कारणों से हैद्राबाद से तुरन्त कलकत्ता मैं जा तो नहीं पाया, परंतु कलकत्ते से मनुभाई एवं कीर्ति के सारे समाचार पाता रहा । उनका मार्गदर्शन करता रहा ।

कीर्ति ने कलकत्ता में अपना दीर्घ-चिंतित क्रान्तिकार्य व्यवस्थित रूप से आरम्भ करने से पूर्व प्रामाणिकता से धन कमाकर और परिवार को उसके द्वारा सहायता पहुँचाकर अपनी धनार्जन-क्षमता को सिद्ध करना चाहा था । प्रारम्भावस्था के अपार कष्ट तो उसे उठाने पड़े, परंतु परिश्रम, प्रामाणिकता एवं नीतिपूर्वक धन कमाया जा सकता है यह वह बताना चाहता था । अपने उन दिनों के प्राथमिक भारी कष्टों को उसने मुझ पर लिखे हुए बाद के एक पत्र में इस प्रकार वर्णित किया है :-

"मैं मद्रास से कलकत्ता आया ।

"कलकत्ता में मैं बेकार था । प्रथम घर घर जाकर एक एक पौंड चाय बेचना आरम्भ किया । उस समय एक बेकार मित्र रेड्डी भी वहाँ आने के लिये तैयार हुआ । मैंने उसे आधी में से आधी रोटी खाने बुलाया । खर्च के दो छोर मिलाने इलैक्ट्रिक फिटिंग शुरु किया । आपके पास से २०००/- (दो हज़ार) रुपये मंगवाये, जिसमें से मैंने और रेड्डी ने इन्स्टालमेंन्ट पर गाड़ी खरीदकर मिटरवाली टैक्सी चलाने का तय किया । पू. मनुभाई इत्यादि ने आपको वह बतलाया और आपको वह पसन्द नहीं आया, इसलिये वे रुपये मैंने मनुभाई से उठाये नहीं । रेड्डी फेरी करने लगा तथा मैं चाय बेचने और फिटिंग करने लगा । उस बीच बम्बई में करन्ट चॅन्ज हो रहा था । मुझे पंखे लाने का विचार आया परंतु वैसा नहीं किया । रेड्डी नौकरी पर लग गया । मैं भी नौकरी पर लग गया । परंतु वहाँ मेरी मेहनत को धर्मादा (सखावत) के तराजू में तोला गया । जैन मुनियों के कहने पर बनाया गया धर्मादा का भोजनालय मुझे बतलाया गया । जब फिटिंग करता था तब मुझे चार दिन की मज़दूरी केवल चार आना मिली थी, वह घाव अभी दिलमें से जा ही नहीं रहा था, क्योंकि वह थी मेरे पसीने की कीमत । और उसमें फिर यह नया घाव लगा !

"दूसरे दिन से मैंने जिनालय जाना छोड़ दिया, रेड्डी के साथ बैठकर क्रान्ति के विचार किये । मद्रास से आया था - क्रान्ति के विचार छोड़कर मेरी कीमत बतलाने, पैसे कमाकर परिवार की ओर का मेरा फर्ज़ पूरा करने ! और चाहता था कि पहली बार घर पर मेरी कमाई के पैसे भेजूंगा....!! पर आप ही सोचिये, (मेरे परिश्रम-पसीने के पैसे मुझे नहीं चुकाने के और बदले में केवल

धर्मार्थ भोजनालय में भोजन करने जाने के उपर्युक्त बदले के घावों से) मेरी परिस्थिति कैसी बनी होगी ?"

यह था उसके कलकत्ता के कार्य का प्रथम कठोर अनुभव, जैसा कि उसने अपनी करुण जीवनकथा को उजागर करनेवाले कुछ मुद्दों भरे तीन मूल्यवान और व्यथापूर्ण ऐसे मार्च १९५९ के मुझ पर लिखे हुए ३ पत्रों में, स्वयं वर्णित किया है। ये पत्र उसने अपने करुण, असमय देहान्त के आठ माह पूर्व जन्मभूमि अमरेली निकट के ननिहाल स्थान धारी से लिखे थे। वहाँ उसे कलकत्ता से अपनी इच्छा के विरुद्ध हमारी पू. माताजी ने बुलाया था — अपनी मातृसहज चिंता और राग-भावना से जबर्दस्ती पूर्वक कहीं उसका सगाई सम्बन्ध-संसार सम्बन्ध जोड़ने हेतु ! वास्तव में दृढ़-संकल्प कीर्ति और मैं — हम दोनों विवाह करना नहीं चाहते थे। उस समय मुझे अपने अनुस्नातक अध्ययन तक संकल्प-बद्ध जानकर, माँ स्वाभाविक रूप से बेचारे कीर्ति के पीछे लगी थी — मुझ से छोटा होते हुए भी और अपने क्रान्ति-कार्य-सिद्धि हेतु अविवाहित रहने के लिए सुदृढ़ होते हुए भी !! वैवाहिक जीवन अवश्य ही उसके क्रान्ति-कार्य में बाधारूप बनेगा यह स्पष्ट जानते हुए भी माता के प्रति भक्ति के कारण उसकी आज्ञा उठाकर, कष्टों के बीच से भी वह उसके बुलावे से उसके पास ननिहाल पहुंचा था। मेरी उसके प्रति सदा सहानुभूति होने से वह अपनी अंतर्व्यथाएँ खुले दिल से मुझे लिख दिया करता था — मेरे खिलाफ़ भी कहीं कहीं, आदरपूर्वक, अंगुलि उठाते हुए। वहाँ अपने गंभीरतम दोराहे पर आ खड़े रहने के कारण उसने अपने जीवन की बहुत कुछ वेदनाएँ प्रथम बार इन तीन पत्रों में व्यक्त की थीं। इन सभी में उसका दर्दभरा जीता जागता जीवन-अनुभव था, गहरा दर्द था, मातृभक्ति फिर भी अपनी संकल्प-दृढ़ता थी, जीवन के गंभीर प्रश्नों का गहन चिंतन था, समाज और देश की समस्याओं का तादृश चित्रण था और सबसे ऊपर था उसका, एक सजग सच्चे जीवन का आदर्श और क्रान्त-दर्शन। अपने संघर्षमय जीवन और चिंतन को वाचा देनेवाले ये तीनों पत्र, मुझ पर लिखे हुए होते हुए भी और मुझ पर भी प्रश्न उठाते हुए भी, सभी के लिये पठनीय हैं, चिंतनीय हैं, अधिकांश में अनुकरणीय हैं। वे सारे वैसे के वैसे अन्यत्र योग्य स्थान पर दिये गये हैं।

इन पत्रों में इंगित एवं सम्बन्धित बहुत-सी-बातें और घटनाएँ मैं विस्तार से १९५८ के अपने अल्पकालीन शांतिनिकेतन विद्या-वास से भी अधिक, १९५९ के उसके कलकत्ता में प्राकृतिक चिकित्सालय में गंभीर रूप से शय्यावश रहने के काल में सेवा में साथ रहने पर जान सका। उस के कई निकटतम मित्रों एवं उसके 'पूजक', उससे 'उपकार-प्राप्त' दीनजनों से भी ऐसा बहुतकुछ जाना जो कि चौंकानेवाला, रोंगटे खड़े कर देनेवाला और एक नये क्रान्तिकार को तादृश दर्शानेवाला था। इन सब में भ्रष्ट, भ्रष्टाचारी बन चुके भारत का, पद पद पर कीर्ति द्वारा किये गये विरोध, विद्रोह एवं संघर्ष का तथा प्रथम कुछ हिंसा-युक्त और बाद में संपूर्ण अहिंसक क्रान्ति का दर्शन है, आर्षदर्शन

है । मुक्त भारत को 'भ्रष्टाचार मुक्त भारत' बनाने उसके स्वयं के द्वारा छोटे स्तर पर भी किये गये पुरुषार्थों का उसमें चित्रण है ।

कीर्ति के इन क्रान्ति-अभिगमों और पुरुषार्थों का मैं बचपन से ही कुछ साक्षी, अनुमोदक और पुरस्कर्ता रहा हूँ । मुझ से कहीं अधिक उसे अपने जीवन-निर्माता एवं जीवन-त्राता ऐसे सरदार पृथ्वीसिंह, बालकोबाजी एवं करुणा-प्रेम के अवतार आचार्य गुरुदयाल-मल्लिकजी से ऊर्ध्वगगन में उड़ान मिली है ! जीवनभर के करुणा-कार्यों के बिना ऐसा संत-कृपानुग्रह किसे मिल सकता है ? कीर्ति के छोटे-से फिर भी सतत निरंतर अप्रमादपूर्ण कार्य-रत जीवन में यह अनुग्रह सर्वाधिक रूप से, उसके प्रति अविराम बहती करुणाधारा के रूप में बहता हुआ, उसे उसमें भिगाता हुआ, जीवनांत के चार महीनों में प्राप्त होता रहा इस करुणा-प्रेमावतार रहस्यवादी "चाचाजी" गुरुदयाल मल्लिकजी से ! कीर्ति का रक्षण-संरक्षण एवं ऊर्ध्वगमन प्रत्यक्ष एवं परोक्षरूप से मल्लिकजी के अदृश्य हाथ और हृदय द्वारा जो होता रहा है, हुआ है, वह इस वर्तमानकाल की एक असंभव-सी, आश्चर्यपूर्ण, अभूतपूर्व घटना है !! कीर्ति के करुणाभरे क्रान्तिकार्यो का प्रत्यक्ष परिणाम दर्शाने वाली, उन्हें प्रमाणित करनेवाली मानों एक मुहर है ।

परंतु इन सारी अलौकिक सत्य-घटनाओं के विषय में तो सब कुछ इस कथा के अन्त में । पूर्व उसके हम पायेंगे एक झलक, एक झाँकी इस युवा क्रान्तिकार के, दीन-हीनों के उत्थान एवं नूतन क्रान्ति के निर्माण से पूर्ण जीवन की ।

यहाँ कथित, कलकत्ता के जीवन के उसके प्रारंभिक कठोर अनुभवों के बाद की कथा की कडियों को जोड़ने से पूर्व उसके जीवन की दो घटनाओं को जोड़ना समीचीन होगा — उल्लेख रूप में । एक में, सथरा के शिविर के पूर्व, अपने क्रान्ति-कार्य की खोज की धून में, अपने आदर्शरूप शहीदों — भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद आदि के पद चिह्नों पर वह घर से पलायन कर गया था — अंग पर केवल दो वस्त्रों के साथ और जूते-चप्पल भी छोड़कर, खुले पांव ! तब उसे प्रथम मिलिट्री में दाखिल होना था, जो कि परिवार को स्वीकार्य नहीं था और प्रथम परीक्षा में मिलिट्री अफसरो द्वारा भी कुछ बातों में न्यून पाया गया था । फिर उसे स्थान स्थान पर भ्रष्ट रिश्वतखोर अफसरों के विरुद्ध विद्रोह जगाना था — सब कुछ शुरु शुरु में अकेले ही ! 'एकला चलो रे' गानेवाला वह सदा कहता रहता कि शेर तो अकेला ही घूमता है !! इस क्रान्ति की अकेली यात्रा में, भ्रष्ट अधिकारियों का भंडा-फोड़ करने की अपनी मुहिम में, उन भ्रष्टसत्ताधीशों द्वारा झूठे इल्ज़ाम उल्टे अपने पर पाकर वह राजस्थान के भरतपुर में पकड़ा भी गया था और बर्फ़ की शीत-शिलाओं पर सज़ा के रूप में सुलाया भी गया था । परंतु अविचल और सत्यवान कीर्ति आख़िर इस उपसर्ग-कष्ट से निर्दोष मुक्त किया गया था ।

दूसरी घटना लींबड़ी के बाद पूना-उरुलीकांचन जाने के बीच बम्बई की है, जहाँ उसे हमारे सबसे बड़े अग्रज ने अपने माटुंगा गुजराती क्लब के कैन्टीन के कॉन्ट्रैक्ट के दौरान, उसका (लघु बंधु का ही !) शोषण करते हुए सहायक के रूप में रखा था, जिस कार्य में उसे धोने पड़ते थे होटल के झूठे बर्तन ! क्रान्ति-आकाश का मुक्त-पंछी वहाँ भी कैसे बंधा रह सकता था ? वहाँ से उड़कर, फिर कुछ क्रान्ति-कार्यों का अनुभव लेकर वह लौट आया था हम सब के पास — एक दर्दभरा, प्रेम-प्यासा मुखड़ा लेकर । काँप उठे थे, उमड़ पड़े थे सहानुभूति में हम सबके उसके प्रति आँसू और बड़े अग्रज के प्रति कुछ विवशतापूर्ण धिक्कार-भाव ।

अतीत के ऐसे कटु अनुभव और मद्रास के कठोरतम अनुभव कीर्ति के आगे के कलकत्ता के क्रान्ति-कार्यो से कुछ संबंध रखनेवाले थे । हमारे तथाकथित 'स्वजनों' (!) के विषय में अनकहे भी ये अनुभव बहुत कुछ कहनेवाले थे । जब सहजभाव से अपनी यह स्वजन-कथा की वेदना कीर्तिने बाद में पूज्य बालकोबाजी के प्रति व्यक्त की थी, तब उन्होंने उसे संत तुलसीदासजी का यह मर्मपूर्ण, प्रसंगोचित, सुंदर भजन सुनाया और सिखाया था कि जिसे 'राम' अर्थात 'सत्य' प्रिय न हो वे परम स्नेही-स्वजन हों तो भी उनका संग छोड़ देना चाहिये :

"जाके प्रिय न राम वैदेही....

सो छॉडिये कोटि वैरी सम, जद्यपि परम सनेही....

जाके प्रिय न राम वैदेही

"तज्यो पिता प्रह्लाद, विभीषण बंधु, भरत महतारी ।

हरि हित गुरु बलि, भये मुद मंगलकारी....

जाके प्रिय न राम वैदेही ।" (तुलसीदास)

प्रकरण-४ Chapter-4

क्रान्तिकारों और कलाकारों की क्रान्ति-नगरी में क्रान्ति-कार्य-विस्तार

कीर्ति ने इलेक्ट्रिकल पंखों के फिटिंग में अच्छी निपुणता प्राप्त करने के कारण इसे अपना धनार्जन क्षेत्र बना लिया था । मैंने उसे इस कार्य में अधिक प्रोत्साहित और स्थिर करने हेतु न केवल अपनी ओर से अधिक पैसे भिजवाये, परंतु सहानुभूतिपूर्ण उदार हृदय अग्रज चंदुभाई एवं सदा ममतामयी माँ की ओर से भी । कलकत्ते में सतत सेवा-संवेदनाशील मनुभाई सदा की भाँति कीर्ति को सर्व प्रकार की सहायता करते रहे, अपने समय समय पर के मूल्यवान मार्गदर्शन के साथ । सभी की इन सहायताओं एवं सद्भावनाओं के साथ कीर्ति ने बड़े उल्लासपूर्वक अपने क्रान्तिलक्षी व्यापार-कार्य का सुव्यवस्थित ढंग से शुभारम्भ किया, जो दिन-ब-दिन विकसित होता रहा । रेड्डी उसके साथ ही था । छोटे स्तर पर उसे अपनी इलैक्ट्रिक कॉइल वाइन्डींग फैक्ट्री हेतु अधिक काम करनेवालों की आवश्यकता थी । कीर्तिने पूरी जाँच-पड़ताल के बाद गरीब से गरीब परंतु प्रामाणिक एवं किसी प्रकार के व्यसनों-धूम्रपान तक के – से मुक्त मज़दूरों-कारीगरों को चुना । उनमें से अधिकतर बेकार और ज़रुरतमंद दीन बिहारी और बंगाली थे, जो केवल "सत्तु" खाकर जीते थे और कभी कभी रीक्षा खींचकर कमा पाते थे, वह भी अगर उन्हें 'किराये पर पाने का सौभाग्य मिला' तो !

इन काम करनेवाले मज़दूरों को भर्ती करने के बाद रेड्डी और कीर्ति ने उन्हें अपेक्षित तालीम देना शुरु किया । काम में महारत के उपरान्त उन्हें व्यसनरहित एवं नीतिमय, प्रामाणिक, भ्रष्टताविहीन जीवन बनाने हेतु तैयार किया गया । काफी समय तक उन सब के इस प्रकार के आवश्यक वर्ताव का अवलोकन करने के बाद उनको उदारतापूर्वक अपनी छोटी-सी फैक्ट्री के एक नये प्रस्थान में जोड़ा गया । कीर्ति के हृदय में लंबे अर्से से रही हुई जयप्रकाशजी की 'फैक्ट्री-दान' की योजना उसने कार्यान्वित कर दी । उसके उपर्युक्त सभी समर्पित एवं नीतिमान मज़दूर बना दिये गये उसकी छोटीसी फैक्ट्री के हिस्सेदार ! सभी उसके अपने समान !! उसने उन सब के बर्ताव एवं कठोर कार्य के चुस्त नियम बनाये । उसका यह नूतन प्रयोग सफल होता गया और उत्पादन के साथ अच्छे परिणाम भी लाने लगा । कीर्ति कुछ संतुष्ट था, परंतु अभी तो उसके मिशन को दूर तक जाना था, दूर, अति दूर ।

कीर्ति-रेड्डी स्वयं तो विशुद्धतम जीवन जी रहे थे – न केवल धूम्रपान, मद्यपान, मांसाहारादि रहित, परंतु पूरे "सात व्यसनों" से रहित, जो कि जैनाचार में बतलाये गये हैं और जिनका पालन करना आसान नहीं था वर्तमान नगरों के जीवन में । उक्त व्यसनों के अतिरिक्त उनमें वर्जित थे - जुआ खेलना, आखेट-शिकार-हिंसा, परस्त्री गमन आदि आदि । इन सभी की ओर समझा समझाकर

सभी साथियों को स्वेच्छापूर्वक जोड़ते हुए कीर्ति भी सभी के साथ "समानतापूर्वक" जीने लगा – खान-पान, रहन सहन, पहनावा : सभी बातों में । वह यहाँ तक कि एक बार जब मैंने माँ और अग्रज चंदुभाई के अनुरोध से उसे कुछ अच्छे कपड़े – शर्ट, सुट आदि हैद्राबाद से भिजवाये तब उसने स्वयं उनका उपयोग किये बिना अपने सहयोगी साथियों में बाँट दिये । उन वस्त्रों में से एक कोट-पतलून-उसकी स्मृति के रूप में मैंने अब तक सम्हालकर रखा है । उसके व्यवहार खानपानादि उपर्युक्त सात व्यसन रहित तो थे ही, परंतु उसका ऐसा शाकाहार भी इतना सादा और भारत के दरिद्रों-का-सा था कि एक बार जब मैंने उसकी भावी में कमबेश आई हुई विफलता के सन्दर्भ में बातचीत की थी तब उसने मुझे कुछ व्यथावश कहा था –

"प्रतापभाई ! कलकत्ता आने के बाद मैं अपने कार्यमिशन में समर्पित भाव से जुटा हुआ रहा हूँ । मैंने न कभी एक रसगुल्ला खाया है, न कोई सिनेमा देखा है, न जीवन के किसी मौज-शौक को अपनाया है ! इतना होते हुए भी मेरा भाग्य क्यों मेरे विरुद्ध रहा है कि मैं मेरी मनचाही सफलता नहीं पा सका हूँ ?"

तब मैंने उसे आश्वासन देकर धैर्य बंधाया था कि, "श्रद्धा रखो । कभी हमारे अदृष्ट पूर्व-कर्म अपना खेल अदा कर रहे हैं, परन्तु एक दिन तुम निश्चित रूप से पूर्ण प्रकाशमय साफल्य पानेवाले हो । अच्छा कठोर कार्य एवं पुरुषार्थयुक्त साधना कभी निष्फल नहीं जाते, जो कि तुमने अपनाया हुआ है – 'न हि कल्याणकृतं कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति !' (गीता)

कीर्ति को तब, प्रतिकूल परिस्थिति के बीच भी आशा जगी थी और अपनी श्रद्धा दृढ़ बनी थी । अस्तु ।

कीर्ति का "फैक्ट्री दान" का प्रयोग छोटे-से स्तर का होते हुए भी अच्छा सफल होने लगा था – कार्यक्षमता, गुणवत्तायुक्त उत्पादन और उच्च नैतिक-चारित्रिक मूल्यों के प्रसारण-सभी दृष्टियों से !

अपनी इस थोड़ी-सी फैक्ट्री-कार्य-व्यवस्था के साथ साथ अपने आयोजित क्रान्ति-कार्य के मिशन को साकार करने कीर्ति ने कलकत्ता में एक कठोर तप-जप पूर्वक नमस्कार महामंत्र-नवकार मंत्र की २१ दिनों के उपवास सहित साधना प्रारम्भ की । इसके विषय में उसने न केवल अपने धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन से, परंतु किसी जैन मुनि से प्रायोगिक मार्गदर्शन भी प्राप्त किया था ।

बड़ी कठोर प्रक्रिया थी यह, परंतु कीर्ति एक अति दृढ़ संकल्पमय इच्छाशक्तिपूर्ण व्यक्ति था । उसने यह उपवास शय्या में सोते सोते नहीं, स्वयं भी अपना परिश्रमभरा फैक्ट्रीकार्य करते करते प्रसन्नतापूर्वक प्रारम्भ किया और चालू रक्खा । प्रातःकाल की अमृतवेला में अपनी निर्धारित अनेक नमस्कार मंत्रों की मालाएँ वह पद्मासन में बैठकर, एकाग्रतापूर्वक गिनने लग जाता था – जल भी पिये बिना ! माला-जाप के बाद ही वह थोड़ा जल लेता था और फिर अपने फैक्ट्री कार्य में दिनभर लगा रहता था – न कहीं आराम, न कोई आहार ! फिर भी संकल्प और प्रसादपूर्ण चित्त-प्रसन्नता में कोई फर्क नहीं । इस प्रकार भक्तिपूर्वक की इस उपवास-आराधना के नव दिन बीत गये....

दसवें दिन प्रातःकालीन नवकारजाप के बाद कीर्ति स्वयं एक भारी-भरकम सिलिंग फॅन उठाकर टेबुल स्टूल पर चढ़कर छत नीचे उसका फिटिंग कर रहा था.... पर यह क्या ?... इस परिश्रम से आज वह थक गया और नीचे बैठ गया फिटिंग करने के बाद.... उसकी थकान उसे मजबूर कर रही थी उपवास तोड़ देने.... उसने कदम उठाये हॉटल की ओर.... घर तो उसके था नहीं और न कोई उसकी चिंता करनेवाले स्वजन, जो कि उसे भली भाँति उपवास का 'पारणा' करवा सके । एक परिचित हॉटेल पर पहुँचकर उसने ऑर्डर दिया राइस प्लैट का..... प्लैट टेबुल पर आई.... प्रथम कोर हाथ में उठाये उसके पूर्व तो दिखाई दिया सामने उसका एक परिचित मित्र फटेहाल कपड़ों में, आँखों में आँसू भरे हुए, अत्यंत दयनीय दशा में कीर्ति से दयार्द्र प्रार्थना करता हुआ :

"कीर्ति ! मुझे बड़ी मेहरबानी कर माफ़ कर दे... मैंने तुम्हें धोखा देकर तुम्हारा घोर विश्वासघात किया है तुम्हारे पसीने के पैसों की उठांतरी करके.... । मेरे इस पाप ने मेरा सर्वनाश कर दिया है... अब मैं दर दर की ठोकरें खाता भटक रहा हूँ..... एक सप्ताह से मैंने कुछ खाया नहीं हैं.... मेरे महापाप भरे विश्वासघात के लिये मुझे क्षमा कर दे और मुझे कुछ खाने के लिये दे.... ।"

करुणात्मा कीर्ति यह सुनकर खड़ा हो गया.... उसकी आँखों में भी सहानुभूति के आँसू छलक पड़े.... मौनपूर्वक उसे क्षमा दे दी और अपनी बिन-खायी राईस प्लैट उसके सामने धर देकर, उसके इस विश्वासघाती मित्र प्रेमचंद को डाँट का एक शब्द भी कहे बिना उठकर, चला गया हॉटेल के काउन्टर पर और चुका दिया राईसप्लैट के छः आने का बिल जाते जाते ।

उस समय उस दिन उसकी जेब में इतने ही पैसे थे । अपने लिये दूसरी राईसप्लैट का ऑर्डर वह दे नहीं सका । एक और दिन का उपवास उसे हो गया ।

विश्वासघाती कृतघ्न के प्रति भी क्षमा और दया रखना कीर्ति के करुणामय लक्ष्य की विशालता थी । कैसा दर्दे-दिल सहृदय इन्सान !

दूसरे दिन उसने अपने उपवास छोड़े.... उसकी नवकार मंत्र की जपमाला भी ठहर गयी.... स्वयं आरंभ की हुई अपनी वह महान साधना वह पूर्ण नहीं कर सका । परंतु अपूर्ण होते हुए भी उसके आश्चर्यकारी परिणाम सामने आये उसकी साधना-सिद्धि दर्शानेवाले एक अभूतपूर्व जिनशासन देवता के प्रत्यक्षीकरण-प्रसंग में, उसके देहत्याग के १४ दिन पूर्व । कीर्ति की दृढ़ इच्छाशक्ति के परिणाम स्वरूप स्वर्ग के देवता को ऊपर से उतरकर तब उसके सामने आना पड़ा था – कीर्ति के और हमारे सारे परिवार के कई रहस्यों का उद्घाटन करते हुए !

परंतु इस अद्भूत, प्रेरणाप्रद-घटना का वर्णन हम अंत भाग में करेंगे - २३-१०-१९५९ शुक्रवार के दिन घटित यह प्रसंग उसकी "साधना-सिद्धि दर्शक-परिचायक अभूतपूर्व जिनशासन देवता का प्रत्यक्षीकरण" के शीर्षक से ।

कलकत्ता में कीर्ति के उपर्युक्त उपवास + नवकारमंत्र साधना के विषय में, उन दिनों हम सभी को हैदराबद और अहमदाबाद या अन्यत्र निवास करने के दिनों में, कोई समाचार नहीं थे, सिवा कि उसकी एवं उसकी फैक्ट्री की सामान्य गतिविधियों के ।

शायद अपनी हर प्रवृत्ति को, उसकी सिद्धि के पूर्व गोपनीय रखना यह उसकी प्रकृति थी -

सभी क्रान्तिकारियों की भाँति !

जहाँ तक मेरा प्रश्न था, मेरी भारत-यात्रा के बाद एक ओर से मैं हैदराबाद में मेरा इन्टरमीडियेट कॉमर्स एवं आर्ट्स का अध्ययन और साथ में संगीतगुरु पूज्य 'नादानंद' बापूरावजी के चरणों में तथा सरकारी संगीत-नृत्य विद्यालय में शास्त्रीय संगीत का अध्ययन कर रहा था, तो दूसरी ओर से पूर्व उल्लिखित पारिवारिक एन्जीनीयरींग कंपनी की पार्टनरशीप से भी संबद्ध था ।

इसी बीच, योगानुयोग एवं किसी पूर्वसंस्कार-ऋणानुबंध संबंध से रेपल्ली-आंध्र-में महान परंतु गुप्त रही ज्ञानयोगिनी चिन्नम्मा माताजी के पास दो बार रह आया था । दूसरी बार की मेरी यात्रा के दौरान चिन्नम्मा उनके पावन दिव्य सान्निध्य की निश्रा में उनके अलौकिक अगमनिगम के आध्यात्मिक अनुभवों से, जो कि उनके 12 + 6 = 18 अठारह वर्षों के बाह्यांतर मौन-जीवन से निष्पन्न थे, अभिभूत और प्रभावित होने में मैं सद्भागी बना था । उन अनुभूतियों की अकथ कहानी कुछ तो अभिव्यक्त करने की थोड़ी-सी, व्यर्थ भी सही, चेष्टा मुझसे ''चिन्नम्मा के चरणों में'' के लेखन के उपक्रम में अन्यत्र हुई है ।

इस के बाद फिर उड़िसा-आंध्र पदयात्राओं के बाद तमिलनाडु की पदयात्रा में विनोबाजी के पास मेरा दूसरी बार जाना हुआ । वहाँ कुछ काल तक पदयात्रा कर फिर ७ जून १९५६ के स्मरणीय दिन पर (कि जिस दिन वे गांधीजी से प्रथम बार मिले थे १९१६ में !) कांजीवरम् में बाबा से मेरी महत्त्वपूर्ण, सुदीर्घ बैठक हुई — अनेक विषयों की चिंतना में । ये सारी भी शब्दबद्ध हुई है मेरी पुस्तक ''स्थितप्रज्ञ के संग'' में एवं कुछ सामयिकों में । इस चिंतना में बाबा विनोबाजी ने समुचित मार्गदर्शन देकर मेरे आगे के संगीत, साहित्य, दर्शन के अध्ययन हेतु अनुमति एवं आशीर्वाद प्रदान किये, जिसके परिणाम स्वरूप ही भविष्य में मेरे हाथों से 'प्रकटी भूमिदान की गंगा' आदि आकाशवाणी रूपक, २०,००० बीस हजार बालकों का साबरमती सरिता पट पर 'ॐ तत्सत्' का विशाल समूहगान एवं बाद में ''ईशोपनिषद् + ॐतत्सत्' L.P. रिकार्ड आदि चिरंतन साहित्यिक-दार्शनिक-संगीत विषयक कार्य संपन्न होनेवाले थे ।

तत्पश्चात् १९५६ में विनोबाजी के आशीर्वादों को लेकर अहमदाबाद प्रज्ञाचक्षु पू. पंडितश्री सुखलालजी की विद्या-निश्रा पाने में सद्भागी बन सका था और उपर्युक्त विषयों का गहन अध्ययन कर पाया था । पंडितजी के सामीप्य में ही फिर मैं विशेष सद्भागी बन पाया था — गुरुदेव रवीन्द्रनाथ एवं महात्मा गांधीजी के अंतेवासी एवं महान रहस्यवादी संत पूज्य गुरुदयाल मल्लिकजी का निकट सान्निध्य एवं प्रेम पाने का । मल्लिकजी ही कीर्ति के जीवन की अंतिम दिनों में रक्षा एवं ऊर्ध्वगमन के सर्वाधिक निमित्त बने थे, जिस विषय में आगे देखेंगे ।

अहमदाबाद में पू. पंडितजी की निश्रा में दो वर्ष एकाग्ररूप से B.A. का अध्ययन एवं उनकी किंचित् सेवा करने का लाभ पाकर, उनकी एवं पू. मल्लिकजी की प्रेरणा, अनुमति अेवं आशीर्वादों से ग्रीष्म १९५८ में विश्वभारती शांतिनिकेतन पहुँचा — 'विद्याभवन' में M .A. अनुस्नातक हिन्दी साहित्य एवं संगीतभवन में रवीन्द्र संगीत सीखने हेतु । कीर्ति के निकट कलकत्ता में रहकर उसका

मार्गदर्शन एवं सहाय करते रहने का भी मेरा आशय था । शांतिनिकेतन के मेरे इस चिर-अभीप्सित निवासकाल के दौरान विविध विद्याध्ययनों एवं गुरुदेव के निकटतम अंतेवासियों के सत्-सान्निध्यों का आनंद-लाभ मुझे तरुओं की छाया के विद्याभ्यास एवं खुले पैरों से चलने में पृथ्वी-स्पर्श-प्राप्ति आदि अन्य लाभों के उपरान्त मिल रहा था जिस आकाश के नीचे एवं जिस धरती पर विहरते हुए गुरुदेव ने अपनी चिरंतन कविताएँ अेवं अन्य कृतियाँ सृजित की थीं ! गुरुदेव के उक्त दिग्गज अंतेवासियों में से कुछ थे आचार्य क्षितिमोहन सेन, निताई विनोद गोस्वामी, शांतिदेव घोष आदि एवं हिन्दी विद्वान् प्राध्यापक डो. रामसिंह तोमर, डो. शिवनाथ, डो. कनिका दीदी, इत्यादि, जिन सभी की सन्निधि में उन्मुक्त आकाश और वृक्षों के तले बैठकर एम.ए. का अनुस्नातक अभ्यास भी बड़ा धन्य हो गया था । विशेष में पू. मल्लिकजी के दूर से आते रहते पत्र उनके भूतकाल के गुरुदेव-निश्रा के शांति-निकेतन-वास के कई चिरस्मरणीय संस्मरणों से मेरे हृदय को अधिक आनंदित एवं समृद्ध बना रहे थे । ये सारे आनंदानुभव में छुट्टियों के दिन बोलपुर से कलकत्ता जा जाकर जिज्ञासापूर्ण अनुज कीर्ति एवं सहृदयी मनुभाई के साथ चिंतन कर लौट आता था और उन्हें भी कभी गुरुदेव की इस साधनाभूमि से प्रेरणा पाने शांतिनिकेतन जबरन खींच ले आता था ।

ये सारे स्वर्णसम आनंदानुभव एवं ज्ञानार्जन के अनुभव मुझे सतत समृद्ध कर रहे थे और कीर्ति को भी प्रेरणा एवं अपने मिशनकार्य में बहुत कुछ नूतन उत्साह प्रदान कर रहे थे । हम दोनों के आनंद का पार नहीं था । परंतु इसी बीच नियति को कुछ और करना था । यहाँ एक अकल्पित-अप्रत्याशित समस्या खड़ी हुई । विश्वभारती में शाकाहारी भोजनालय होते हुए भी साथ-ही-साथ चल रहे मांसाहारी भोजनालय का अस्तित्व और इस दुर्गंध में बैठकर वहाँ के अशुद्ध परमाणुओं के बीच अपना भोजन नित्य करना मुझसे अधिक सहन नहीं हुआ । मेरे प्रयत्नों के बावजूद वहाँ कोई फर्क़ नहीं पड़ा । मेरी व्यथा मैंने डो. शिवनाथ एवं पू. क्षिति बाबु जैसे परम हितैषी गुरुजनों के पास व्यक्त की, जिनकी सदा सहानुभूति मिलती रही, परंतु किसी परिवर्तन की सम्भावना से रहित ! आख़िर मुझे अनिच्छा से, बीच में ही शांतिनिकेतन छोड़ने का दुःखद निर्णय करना पड़ा, जिसे सुन संवेदनाशील क्षितिबाबु के नेत्रो में आँसू भर आये और बोले : "गुरुदेव होते तो आपको यहाँ से जाने नहीं देते, आपको रसगुल्ले खिलाते, और कोई व्यवस्था विकल्प कर देते, उनका प्रेम तो छात्रों और बच्चों के लिये निराला ही था... पर अब हम क्या करें ? हम विवश हो गये हैं इस पवित्र विद्यास्थान विश्वभारती के सरकारी केन्द्रीय रूप में परिवर्तित हो जाने से.... ! इसीसे तो यहाँ मांसाहारी भोजनालय का दूषण प्रविष्ट हो गया है !" और यह कहते कहते वे अधिक रो पड़े ! उनकी वेदना को लेकर मेरी अंतर्व्यथा के साथ मुझे वहाँ से चल देना पड़ा — पू. मल्लिकजी को भी सूचना देकर । पू. पंडितजी को भी ।

कलकत्ता आया तो कीर्ति और मनुभाई को भी एक धक्का-सा लगा और मैं भी अधिक व्यथित हुआ । परंतु किसी तरह मुझे अपना संकल्पित M.A. का अनुस्नातक अभ्यास पूर्ण करना ही था । दिव्यानुग्रह से, सद्भाग्य से मुझे, विलम्ब होते हुए भी हैदराबाद के उस्मानिया विश्वविद्यालय के M.A. हिन्दी साहित्य में प्रवेश मिल गया, जहाँ भी डो. रामनिरंजन पांडेय जैसे ऋषिवत् प्राध्यापक और उधर संगीतगुरु पूज्य नादानंदजी के सान्निध्य में अपना साहित्य-संगीत अध्ययन चालु रखने का योग-संयोग प्राप्त हो गया । जब कि कलकत्ता निकट के शांतिनिकेतन को छोड़ देने का और कीर्ति से

फिर बिछड़ने का दुःख मुझे भी रह गया, कीर्ति को भी ! आखिर जीवन की घटनाएँ भी कैसे कैसे निमित्तों-कारणों से अप्रत्याशित, अकल्पित मोड़ लेती रहती हैं !

इधर कीर्ति ने कलकत्ता में अपनी प्रवृत्ति में एक विशेष नया उपक्रम जोड़ा था अपने चल रहे फैक्ट्री-कार्य के साथ साथ ।

यद्यपि उसने अपने पूर्व-उल्लिखित २१ दिन के उपवास और जपसाधन आधे पथ पर अधूरे छोड़ दिये थे, फिर भी उसने प्रातः अमृतवेला में जल्दी जागकर अपने रोज़ाना प्रार्थना, योग-व्यायामादि नित्यक्रम नहीं छोड़े थे । सरदार पृथ्वीसिंहजी, बालकोबाजी, आदि के एवं हमारे परिवार के पत्र-सम्पर्क में भी वह रहता था – विशेष कर हमारी माँ के, कि जिसके प्रति वह असामान्यरूप से भक्तिपूर्ण एवं आज्ञांकित रहता था । मातृभक्ति की अनुपालना में वह अपनी इच्छाओं तक को छोड़ देता था । इसी के साथ साथ उसका किताबी अध्ययन एवं अन्य विद्वानों के संग चर्चा-चिंतन भी चलता रहता था । अपने अध्ययन ओर दीर्घ प्रत्यक्ष अवलोकन (observation) के पश्चात् उसने प्रारम्भिक साम्यवादी (communism) और हिंसक क्रान्ति के विचारों को छोड़ दिया था, परन्तु देश की दयनीय दशा देखकर क्रान्ति-कार्य को प्रायोगिक बनाने के लिये वह तड़प रहा था । उसके प्रत्यक्ष निरीक्षणों और स्वानुभवों ने कलकत्ता की क्रान्ति-नगरी में स्थानिक साम्यवादियों को "दांभिक" एवं भारत के कांग्रेसियों और समीपस्थ घूसखोर बाबुओं को "भ्रष्ट" मानने स्पष्टरूप से बाध्य किया था । दूसरी ओर अपनी आँखों के सामने ही पिस रहे, शोषित-पीडित हो रहे विशाल दुःखी जनसमाज को देखकर वह द्रवित हो रहा था । वह समीप ही देख रहा था भूखे या एकाध बार थोड़ा-सा 'सत्तु' खाकर जी रहे रीक्षा-चालकों, मिलमज़दूरों, फूटपाथ पर सोनेवालों और दिन-रात खटनेवाले निकट २४ परगना, बीरभूम, बर्दवान, बारीसाल आदि जिलों के किसानों को । इन दोनों विरोधाभासों ने उसके दिल को गहरे दर्द से भर दिया था और वह बार बार पुकार उठता था –

"कब तक चलेगा, चलता रहेगा यह सब ? कब तक ?" इस वेदना के साथ वह कब से मिलने जाना चाह रहा था पूज्य बाबा विनोबाजी एवं जयप्रकाशजी से ! परंतु कलकत्ता की अपनी प्रवर्तमान प्रवृत्तियों ने उसे इस हेतु समय निकालने नहीं दिया । फिर भी इन सभी व्यथाओं, तड़पनों, छटपटाहटों का परिणाम था उसके करुणाशील हृदय और चिंतनशील मस्तक में से ऊपजा हुआ उसका नूतन आविष्कार, अभिनव विचार-वाद –

"संपन्नतावाद RICHISM" नूतन प्रकार का समाजवाद/

साम्यवाद – COMMUNISM नहीं, समृद्धि-संपन्नतावाद ।

उसने निकट से, खुद ही पीड़ा झेलकर देखा और महसूस किया था कि "दरिद्रता ही सब दुःखों, दीनताओं और दूषणों की जड़ है ।"

कुछ इसी समय के दौरान कीर्ति के साथी सहयोगी रेड्डी को विवश होकर अपने वतन आंध्र जाना पड़ा था अपनी खेती और परिवार की देखभाल हेतु । कीर्ति के साथ कलकत्ता में जुड़ने से पूर्व वह बेकार था । वास्तव में वह भी मद्रास में शोषक उदानी से बड़ा ही शोषित-पीडित हुआ था,

जहाँ वह मोटरकार ड्राइवर के रूप में कार्य कर रहा था । वह मेरे परिचय में भी तब आया था जब उसे हैदराबाद से मद्रास कार पहुंचाने जाना था और जब वह उसी कार में मेरी भी सहयात्रा के दौरान रेपल्ली-टेनाली विजयवाड़ा के आंध्र प्रदेश में ज्ञानयोगिनी चिन्नम्मा माताजी का स्थान सर्वप्रथम खोज निकालकर पहली बार वहाँ जाने में निमित्त रूप बना था — बड़े काम का 'निमित्त'। वह, कीर्ति और मैं — हम दोनों बंधुओं के प्रति बड़ा ही समर्पित रहा था । कलकत्ते से आंध्र अपने खेत-वतन पर लौटकर भी कीर्ति के मिशनरूप क्रान्ति-कार्य में दूर से भी कुछ सहायता करना चाहता था ।

कीर्ति से उसका पत्रव्यवहार चलता रहा । कीर्ति ने अपने एक पत्र में आत्मीयता और निखालसता से रेड्डी को अपनी उपर्युक्त 'संपन्नतावाद—RICHISM' की अभिनव प्रकार की क्रान्तिकार्य की योजना के विषय में और उससे सहयोग पाने के बारे में लिखा :

कलकत्ता ४-८-१९५८

"बैठा हूँ मैं तेरे दर पे, तो कुछ करके ही उठूंगा ।
बना दूँ ज़न्नत जहाँ पे, या लब्जे-ज़न्नत मिटा दूंगा ।"

"मेरे प्रिय दोस्त एल. सुब्बा रेड्डी,

तुम्हारा २९-७-१९५८ का पत्र मिला, जिसमें तुम (वहाँ) काम के लिये बुला रहे हो । परंतु मैं कलकत्ता में ही 'करेंगे या मरेंगे' करना चाहता हूँ । मतलब कि, मुझे यहाँ ही पैसे कमाने हैं और बाद में मैं व्यापार-प्रतिष्ठान और उद्योग लगाना चाहता हूँ, जिसके द्वारा मैं मज़दूरों और लोगों को ऊपर उठाना चाहता हूँ । मैं इस दुनिया को दिखाना चाहता हूँ कि अगर आप दूसरों के लिये कमाओगे, तो दूसरे आपके लिये कमायेंगे । मैं धनिक बनना चाहता हूँ और सभी को धनी बनाना चाहता हूँ । मैं सुखी बनना चाहता हूँ और सभी को सुखी बनाना चाहता हूँ । धनिक लोग धनिकों के लिये हैं और सरकार धनिकों के लिये है, (जब कि), मैं धनिक होना चाहता हूँ और सभी धनिक बनें यह चाहता हूँ । यह मेरा 'संपन्नता-वाद' RICHISM है । कलकत्ता भारत का सब से बड़ा शहर है, और इसलिये मैं मेरा 'संपन्नतावाद' RICHISM यहीं से आरम्भ करना चाहता हूँ । परंतु अभी इस समय 'संपन्नतावाद' RICHISM का (यह) चिंतक बहुत ही गरीब है, इस लिये अगर इस काम के लिये तुम्हारे पास धन हो, और (अगर) तुम्हें उसकी ज़रुरत न हो और तुम भेज सकते हो, तो तुम भेजो । परंतु अगर तुम मेरे सच्चे दोस्त हो तो कृपा करके मुझे सहाय करने के लिये अपने आप को कष्ट में नहीं रखना । अगर तुम्हारे पास सारी सुविधा, सारे स्रोत, सारे इंतज़ाम हों तभी तुम्हें भेजने की अनुमति है — सौ रुपये और कोई भी रकम जो तुम भेज सको मनी ऑडर से । इसलिये अगर तुम मनी आर्डर भेजो तो कृपा करके पी.एच. देसाई के नाम से C/o. वी. नाग्रेचा एन्ड कं. 29/1, आर्मेनियन स्ट्रीट, कलकत्ता-१ के पते से भेजना ।

"पी. एच. देसाइ अर्थात् हमारे मित्र श्री प्रेमचंदभाई, वह भी 'रोड इन्स्पेक्टर' के रूप में मेरे साथ मेरे संपन्नतावाद-RICHISM से जुड़ा हुआ है । हम दोनों यहाँ सुखी हैं और प्रभु से प्रार्थना करते

है तुम-को और सभी को सुखी बनाने की ।

"धन्यवाद सह,

तुम्हारा मित्र, कीर्तिकुमार"

(श्री पी. एच. देसाइ के हस्ताक्षर यहाँ दिये हैं । (हस्ताक्षरित) पी. एच. देसाइ)

(पता ऊपर अनुसार M.O. के लिये/मेरे साथ पत्राचार के लिये पता है प्रफुल्ल प्रिन्टर्स का ।)

कीर्ति का यह पत्र बहुत-सी बातों को स्पष्ट करता है :-

१. करेंगे या मरेंगे की संकल्प-शक्ति ।
२.- अपना क्रान्ति-कार्य कलकत्ता में ही करने का निर्धार ।
३. सुखी होने के लिये दूसरों के हेतु कमाना और जीना ।
४. 'सर्वेऽत्र सुखिनो सन्तु' की वैदिक भावना, "शिवमस्तु सर्व जगतः" की सर्वोदय-तीर्थ की जैन भावना और गांधी-विनोबा-जयप्रकाश की 'जयजगत्', 'सर्वोदय', अंत्योदय की भावना । स्वयं संपन्न होना और सभी को सुखी एवं संपन्न बनाने के लिये पुरुषार्थ करना । इस प्रकार का उसका 'संपन्नता-वाद" RICHISM केवल साम्यवाद और समाजवाद का ही ऊर्ध्वीकृत स्वरूप है : सुष्ठु, आध्यात्मिक, साम्यवाद का : संविभाग और वितरण का ही जन्म रूप ।
५. यदि अधिक और स्वैच्छिक हो तभी धन एकत्र करना मित्रों से, औरों से । प्रेमपूर्ण-प्राप्ति, दबावपूर्ण नहीं । साम्यवाद-समाजवाद का यह सर्वोदयी विकल्प भी था ।

कीर्ति के पत्र में व्यक्त ये सारे विचार, टूटी-फूटी भाषा में भी सही, सहज, निखालस एवं प्रामाणिक ढंग से धनप्राप्ति के इच्छुक कीर्ति में छुपे हुए सरल, संनिष्ठ एवं नूतन क्रान्तिकार का दर्शन एवं प्रस्तुतीकरण करते हैं ।

चारों ओर के भ्रष्ट, स्वार्थपूर्ण एवं स्वकेन्द्रित जगत में इस उभरते क्रान्तिकार का मिशन इन विचारों और भावनाओं-अभीप्साओं के साथ, और बिना किसी संपदा-स्त्रोतों के, आगे बढ़ता रहा — उल्टे प्रवाह प्रति तैरने की तरह !

अनोखी और अद्‌भुत गति थी, कथा थी, क्रान्तिकारों और कलाकारों की क्रान्तिनगरी कलकत्ता में करुणात्मा क्रान्तिकार कीर्तिकुमार के सब से निराले, असामान्य (unusual) क्रान्ति कार्यों की, जो अभी तो सब साकार होने जा रहे थे रोमांचक रूप में !!

पथ था उसका सब से अनूठा, सब से जुदा, सब से जोखिम भरा !!!

उसका दर्शन अब करेंगे ।

इस उर्दु शेर का स्वामी रामतीर्थ लिखित दूसरा रूप है :-

"बैठे हैं तेरे दर पे, तो कुछ करके ही उठेंगे ।
या वस्ल ही हो जायगा, या मरके उठेंगे ॥"

प्रकरण-५ Chapter-5

सम्पदा-स्रोत विहीन, कठोरतम, जोखिमभरा और दुर्लभ क्रान्तिमार्ग था - "संपन्नतावाद RICHISM" :

जे.पी. के पद्चिह्नों पर दरिद्रोद्धार एवं रोमांचक परिवर्तन का पथ — न केवल अभावग्रस्तों का, परन्तु पथभ्रान्त असामाजिक तत्त्वों तक का भी !

जिस पड़ाव की ओर अब कीर्ति आगे बढ़नेवाला था वह आत्यंतिक कठोरतम, शायद भयंकर-भयावना था । क्रान्ति के जोश और जुस्से को उसने बचपन से ही संजोया और भरा था अपने हृदय में — जिसमें उसने भारत की आज़ादी के पूर्वोक्त शहीदों-क्रान्तिकारों को अपने आदर्श के रूप में बिठाया था । उसके बाद नेताजी सुभाषचन्द्र बोझ आदि और कार्लमार्क्स, लॅनिन, स्टालिन, टोलस्टॉय, माओ, इत्यादि ने भी उसके दिल और दिमाग का कब्ज़ा लिया था । इन सभी के एवं अन्य विषयों के पठन-मनन, तथा सरदार पृथ्वीसिहजी, बालकोबाजी, केदारनाथजी आदि आप्तगुरुजनों के प्रत्यक्ष समागमों ने उसके चिंतन एवं बर्ताव के क्षितिजों को विस्तृत किया था । बेशक अभी तक विनोबाजी एवं जयप्रकाशजी के साथ उसकी चिंतन-बैठक नहीं हो पाई थी । फिर भी वह अपने अध्ययन और अवलोकन के आधार पर उनसे बड़ा ही प्रभावित हुआ था । तभी तो उसने, छोटे पैमाने पर भी, जे.पी. की फैक्ट्री दान की योजना प्रयोग में उतार दी थी ।

अब वह जे.पी. के पद्चिह्नों पर गांधीमार्गी दलितोद्धार-युक्त क्रान्तिकारी परिवर्तन-पथ का प्रयोग प्रारंभ करने जा रहा था । परिवर्तन-न केवल दीन-दरिद्र अभावग्रस्तों का, किन्तु पथभ्रान्त, असामाजिक, गुंडे-तत्त्वों का भी । जे.पी. ने चम्बल के बेहड़ों में यह प्रयोग किया था और रविशंकर महाराज ने गुजरात में । परंतु यहाँ यह छोटा-सा क्रान्तिकार कलकत्ता के महानगर में वह करने जा रहा था । उसके पास सम्पदा के और मानव-शक्ति के स्रोत थोड़े ही, नहींवत् थे, परंतु भीतर सतत जल रही क्रान्ति की आग के कारण उसके हौसले बुलन्द थे ।

बचपन से ही उसने मेरे साथ सौराष्ट्र के सिध्धांतवादी डाकु-लुटेरों ('बाहरवटिया') की रोमांचकारी सच्ची कहानियाँ न केवल "सौराष्ट्र की रसधार", "सोरठी बहारवटिया" आदि किताबों से पढ़ीं थीं, परंतु गौर से सुनीं भी थीं — और वे भी इनके लेखक राष्ट्रीय शायर श्री झवेरचंद मेघाणी के स्वयं के श्रीमुख से । पूर्वोल्लेखानुसार श्री झवेरचंद मेघाणी हमारे मौसेरे भाई होने के साथ साथ हमारे पिताजी के विद्यार्थी भी थे कि जिनसे उन्होंने कलापी जैसे कवियों की कृतियों का अध्ययन किया था । पूर्वकथन अनुसार श्री मेघाणी हमारे घर पर बहुधा ठहरा भी करते, अपने गीत-कविता गाया भी करते और अपनी शौर्य-कथाएँ सुनाया भी करते । मूलतः उनके राष्ट्रीय गीत लोकगीत मेरे कंठ में बैठ गये और उनकी सोरठी लुटेरों की पराक्रम कथाएँ कीर्ति के क्रान्ति-प्यासे बाल-

हृदय में। ये सारे बीज-रूप संस्कार अब यहाँ जे.पी. के हृदय-परिवर्तक लुटेरों के शरणागति प्रयोगों की छाया में उदीयमान क्रान्तिकार कीर्ति, अपने ढंग के छोटे-से वटवृक्ष के रूप में, विकसित करने जा रहा था। उसका नव-नवोन्मेषी प्रज्ञा भरा क्रान्ति-खोजी दिल और दिमाग ऐसा ही कुछ साकार करने हेतु तरस रहा था, तब ही मानों इसे चरितार्थ करने कुछ ऐसी घटनाएँ उसके सामने सहज स्वाभाविक ही घटतीं चलीं, ज़ो कि न उसने सोची थी, न आयोजित की थीं !

ये इस प्रकार बनी :

पूर्व में वर्णित कीर्ति की जे.पी. मॉडेल की छोटी-सी 'फैक्ट्री दान' : 'मालिकी संविभाग' की साहसभरी प्रयोग-प्रवृत्ति अनेक अभावग्रस्तों एवं पददलित दरिद्र-नारायणों को अपनी ओर आकर्षित कर रही थी। ऐसे लोगों का एक प्रवाह-सा उमड़ पड़ा उसके साथ जुड़ने। परंतु अधिक लोगों को अपने कार्य में लगाने, समाविष्ट करने की गुंजाइश उसके पास कहाँ थी ? उसके पास न तो अधिक पैसे थे, न उत्पादन बढ़ाने की सम्भावना, न कार्य-स्थल की विशालता ! फिर भी उसका करुणा भरा दिल ऐसे तड़पते ज़रुरतमंदों को ना भी कहना नहीं चाहता था। उन्हें उसने अपनी प्रतीक्षा-सूची में स्थान दे रखा।

परंतु दूसरों को मदद करने का उसके उदार-हृदय का कार्य अपने आप अनजान-अज्ञात दुनिया में उसकी प्रसिद्धि बढ़ाने लगा था। परिणामतः उसकी सारी यशगाथा एक ऐसे गिरोह और उसके मुखिया महाबली के कानों पर पड़ी जो कि सब घोर अन्यायों से त्रस्त होकर विद्रोही और पथभ्रान्त बन चुके थे और उनका विरोध-विद्रोह सकारण होते हुए भी उन्हें 'असामाजिक तत्त्वों' की काली-सूची में, कानून की नज़रों में, रखा गया था। उनका यह मुखिया महाबली, स्वयं एक अन्यायभुक्त भोगी, एक अद्‌भूत व्यक्ति था। बिहार से आया हुआ था। नाम था 'मनीराम' — परंतु दिल का धनी-राम था। कद्दावर शरीर, संकल्प-बद्धता सूचित करने वाला सुदृढ़ गोल चेहरा, मोटा माथा, पर इन सभी के बीच भी दूसरों के लिये द्रवित होनेवाला एक छोटा-सा दिल। धोती और कुर्ता पहना हुआ, पर चाल देखो तो किसी तालीमबद्ध महासैनिक की।

ऐसा मनीराम जाकर, अपने चंद मित्रों के साथ खड़ा हुआ एकदिन, अचानक, कीर्ति के सामने, कि जिसकी 'कीर्ति' उसने सुनी थी और सुनी थी उसकी बेहद अनोखी क्रान्ति-योजनाएँ। उसने जाकर चरण छूकर कीर्ति को प्रणाम किया, खुद को उसके क्रान्ति-कार्य में जोड़ने के लिए प्रार्थना की और ढेरों रुपये भी निकालकर सामने भेंट स्वरूप रख दिये !

कीर्ति स्तंभित-सा रह गया। कीर्ति को बेशक धन की और ऐसे सुदृढ़ साथियों की ज़रुरत भी थी, परंतु अपने सिद्धांतो और नीतिमय आचार-मर्यादाओं से युक्त इस क्रान्तिकार ने इतने भारी धन को अस्वीकार करते हुए नकार दिया और आगंतुक मनीराम की छान-बीन एवं परीक्षा करने उसे पूछा :

"ये पैसे आप कहाँ से लाये हैं ? क्या वे चोरी किये या लूटे हुए तो नहीं किसी निर्दोष जन से ?"

"चोरी किये हुए तो नहीं, लूटे हुएँ ज़रुर हैं – परंतु किसी निर्दोष आदमी से नहीं । ये खींच कर लाये हुए पैसे है उन भ्रष्टाचारियों से, काले-बाज़ारियों से, सितमगर गरीबों का खून चूसनेवालों से, करचोरों से और घूसखोर बाबु लोगों से ।" मनीराम ने उत्तर दिया ।

"फिर भी मैं इस का स्वीकार नहीं करूंगा ।" दृढ़तापूर्ण कीर्ति ने कहा ।"

"लेकिन हम गरीबों की भलाई के आपके अच्छे काम के लिये देना चाहते हैं, कृपा कर ले लीजिये ।" उन्होंने दलील की ।

"बेशक ये पैसे सच्चे गरीबों के काम के लिये हो सकते हैं, परंतु जबतक मैं आपको पूरी तरह जानूं नहीं और जब तक आप हमारे सिद्धांतो और काम के तरीकों को जानें नहीं, तब तक मैं राह देखूंगा ।" कीर्तिने फिर दृढ़तापूर्वक कहा ।

"तो हम अब क्या करें ?" पूछा मनीराम ने,

इस पर कीर्ति ने कहा "अभी आप पैसे अपने पास ही रखिये । कल आप हमारी फैक्ट्री देखने, काम समझने और हमारी नीति-रीति सीखने आइये । पहले हम आप की परीक्षा करेंगे और फिर उसमें खरे उतरें तो आपके धन का भी स्वीकार करेंगे और आपको हमारे काम में जोडेंगे भी । पहले हम एक दूसरे को समझें और जानें । आप एवं सभी सुखी हों, शुभरात्रि ।" यह सुनकर मनीराम और साथी बड़े प्रभावित हुए और दूसरे दिन आने का वादा कर पैसे लेकर गये ।

कीर्ति का अशुद्ध धन और अनजाने जन का स्वीकार नहीं करने का यहाँ बुद्धिपूर्ण, सिध्धांतनिष्ठ अभिगम था, जो इसके अभिनव क्रान्ति-कार्य के लिये उचित ही था ।

दूसरे दिन कीर्ति, मनीराम आदि उन सभी नवागंतुकों की गंभीर रूप से जाँच, परीक्षा करनेवाला था और उन्हें अपनी मूलभूत नीतिरीति एवं नैतिक दृष्टि से शुद्ध ऐसी क्रान्ति के प्लान स्पष्ट रूप से समझानेवाला था । उसके छोटे-से फैक्ट्री-कार्य और दीर्घ-चिंतित, आयोजित क्रान्ति-कार्य दोनों के पीछे उसकी एक गहन, संतुलित, भूमिका थी । उसके पास जीवन और जगत का गहन एवं वास्तविक अवलोकन-निरीक्षण-अनुभव था, महान पुरुषों, चिंतकों, क्रान्तिकारों का संग-समागम एवं उनसे चर्चा-चिंतन-विनिमय था; विशाल पठन-मनन था; स्पष्ट विधायक, आर्ष कार्यदृष्टि थी एवं सब से ऊपर बाल्यावस्था के हमारे उत्कृष्ट, दीर्घजीवी परिवार-संस्कार थे । इन संस्कारों में एक ओर से हमारे माता-पिता द्वारा संनिष्ठ रूप से अनुपालित ऐसे करुणा, अहिंसा, राष्ट्रप्रेम एवं विशेषकर जैन सिद्धांत थे, जो कि हमने महात्मा गांधीजी के ही आध्यात्मिक मार्गदर्शक युगुपुरुष ऐसे श्रीमद् राजचंद्रजी से वर्तमान कालानुरूप सुयोग्य, समुचित रूप में आत्मसात् किये थे । तो दूसरी ओर से, खास कर के कीर्ति ने, अपने सन्मुख रखा हुआ एक आदर्श था, जिसमें सौराष्ट्र के डकैतों-लूटेरों-बहारवटियाओं 'डाकुओं' ने भी अपने पर गुज़रे हुए सितमों और अन्यायों के खिलाफ़ युद्ध छेड़ने के दौरान एक उच्च, प्रामाणिक, स्वानुशासन का अभिगम (approach) रखा था – निर्दोषों को, अबलाओं को, बालकों को निशाना नहीं बनाते हुए केवल उन ज़ुल्मी, सितमगर, अन्यायी शासकों या महाजनों पर

निशाना साधने का । कीर्ति ने इन सब का यही अभिगम, अपने ढंग-से अपने अहिंसक क्रान्ति-कार्य में अपना लिया था । इन सभी के परिणामस्वरूप कीर्ति ने अपने हृदय में श्रीमद् राजचंद्रजी के कुछ प्रेरक, मार्गदर्शक विचार-आदेश बिठाकर रखे थे जिनमें से एक दो थे :-

"तुम किसी भी प्रकार के व्यवसाय में हो, परंतु आजीविका हेतु अन्यायसंपन्न द्रव्य उपार्जन मत करना ।"

"यदि आज तुम्हारे हाथों से कोई महान कार्य हो रहा हो तो तुम अपने सर्व सुखों का भी बलिदान दे देना ।"

("पुष्पमाला" : ४६, ७४)

— ऐसे सुनहरे मार्गदर्शनों को दृष्टि सन्मुख रखकर कीर्ति अपने नीतिमय, न्यायसंपन्न धनार्जन करने के एवं अन्य लोगों की सेवा करने हेतु अपना सुखत्याग तक करने के पथ पर चलने चिंतनरत, आयोजनरत एवं कार्यरत था, जैसा कि — उसके संपन्नतावाद-Richism से सभी को सुखी बनाने के महत्त्वपूर्ण अभिनव अभियान विषयक पूर्वकथित पत्र में उसने अपने साथी सुब्बा रेड्डी को लिखा था । (संदर्भ २९-७-१९५८ और ४-८-१९५८ के पत्र) उसकी बुद्धिमत्ता इतनी नूतनता-संशोधक एवं नवोत्पादक, नित्यनवोन्मेषशालिनी थी, कि उसने अपना सारा मौलिक क्रान्तिमार्ग, जे.पी. आदि के पद्चिह्नों पर होते हुए भी, स्वयं ही सूक्ष्मता एवं विशुद्धता से आयोजित कर रखा था । उसके सामने समस्त अनुशासनों एवं आवश्यक गुणों की अपेक्षाओं का सुंदर नकशा था, जिसमें समन्वय होता था तीनों "H" का — HEART (हृदय) HEAD (मस्तिष्क) एवं HAND (हस्त) का । उनमें से कुछ का उसने सुंदर ढंग से वर्गीकरण किया था, जैसे :

1. सख्त, कठोर कार्य एवं शरीरश्रम + गुप्त भूगर्भ प्रवृत्ति ।
2. शरीर स्वास्थ्य : निसर्गोपचार, नैसर्गिक जीवन, शरीर-गठन व्यायाम एवं योग ।
3. मंत्र जाप साधन एवं प्रार्थना आदि ।
4. विनम्रता एवं अन्य लोगों के प्रति स्नेह-सद्भाव : दूसरों का स्वमानभंग, शोषण, अन्याय और अत्याचार-उत्पीडन कहीं नहीं ।
5. उत्तम नीति के रूप में प्रामाणिकता की स्थापना ।
6. अपने से पहले दूसरों को सहाय करने का और सुखी बनाने का अभिगम ।
7. किसी का द्वेष नहीं, सभी के प्रति प्रेम-विशुद्ध, निश्छल, नित्य प्रेम ।
8. मानवतावाद, राष्ट्रवाद, देशभक्ति ।
9. अभावग्रस्तों (दीन-दरिद्रों) को सहाय पहुंचाना, ऊपर उठाना और धनिकों से - न माने, न दें तो - धन प्राप्त कर ज़रुरतमंदों, गरीबों में बाँट देना ।
10. सभी रूपों ओर प्रकारों में विशाल विराट अहिंसा एवं शोषण-विहीनता का पालन ।

कीर्ति के इन जादुभरे चुंबकीय शब्दों में एक बड़ी ताकत थी । "हम कसम खाते हैं कि हम बेशक यह सब देंगे" — कुछ लोगों ने एक साथ उत्तर दिया । एक व्यक्ति तो अपनी प्रतिज्ञा में और भी आगे बढ़ गया और खड़े होकर कह उठा :

"क्या मैं अपना खून निकालकर दूं और उससे लिख दूँ ?"

उसने अपना चाकु तक निकाला इसके लिये....

उनके उत्साह और दृढ़ता से आनंदित होकर कीर्ति ने उसे रोका, उसे गले लगाया और हरएक से कहा —

"आप लोगों के समर्पण भरे निर्धार से मैं बेहद खुश हूँ..... इस ज़ोम-जुस्से को आप सदा बनाये रखेंगे । अब मैं आपके कार्य का नकशा बनाये देता हूँ ।"

यह कहते हुए उसने अपने फैक्ट्री-कार्य और क्रान्तिकार्य की दो प्रकार की आयोजना और नीति-रीति समझाई ।

अपने क्रान्ति-कार्य के मिशन में उपर्युक्त सारी अपेक्षाओं-आवश्यकताओं के उपरान्त प्रथम तो उसने बिलकुछ प्रसिध्धि-विहीन गुप्त भूगर्भ कार्य करने की संकल्पित-समर्पित आवश्यकता सारी समझाई । वास्तव में यह सारे क्रान्तिकारियों और अधिकांश स्वातंत्र्य सेनानियों की नीति-रीति रही है, जिनसे कीर्ति ने अपने बचपन से ही प्रेरणा पाई थी । अपनी इस अनिवार्य आवश्यकता को मज़बूत करने के बाद उसने बारीकी से उन सब के प्रत्येक रात्रि के भूगर्भकार्यो का प्लान तैयार किया । उसके सारे समर्पित कामगार दिन में अपने द्वारा उत्पादन-कार्य में सख़्त रूप से लगे रहते थे । रात में उपर्युक्त जोखिमभरे और असामान्य प्रकार के पूर्वायोजित क्रान्तिकार्य किये जाते थे । हालाँकि इन सारी की सारी हलचलों की हकीकतें और इतिहास सारा एकत्र नहीं हो पाया है — कीर्ति के सद्भावी और सहायक रहे हुए इस लिखनेवाले बंधु के द्वारा भी - तथापि थोड़ी ही रोमांचक सत्यघटनाओं को प्राप्त किया जा सका है । ऐसी प्राप्त घटनाओं का वर्णन करने से पूर्व, उसकी क्रान्तिकारी गुप्त भूगर्भ प्रवृत्तियों विषयक उपर्युक्त प्राथमिक नीति-रीतियों की जानकारी पूरी कर लें । ये सारी अनेकविध प्रकार की थीं ।

प्रथम थी अन्याय-सितम सहनेवाले और अपने जुल्मी, शोषक, बेइमान सेठों, पूंजीपतियों द्वारा सताये गये लोगों को मदद करने की । ये गरीब सितम-सहनेवाले बंगाल के विविध भागों से एवं निकटवर्ती बिहार से आये हुए थे । कुछ लोगों की ज़मीनें ज़मीनदारों द्वारा लूट कर हड़प ली गईं थीं, कुछ को गुलाम बनाया गया था, कुछ की प्यारी निरीह मासूम पुत्रियों का अपहरण कर दुरुपयोग किया गया था और कलकत्ता के अंधेरे 'रेड लाइट' हिस्सों में लहू के व्यापार द्वारा वेश्यागृहों तक बेचा गया था और बेचा जा रहा था ! इन भयंकर अमानवीय कुकर्मों का स्वयं का अवलोकन और पता कीर्ति को था ही, परंतु जब वह ऐसी करुणतम कथाएँ उसके सन्मुख आनेवाले सचमुच में भुक्तभोगी दुःखियों से सुनता था तब वह द्रवित हो जाता था, उसकी करुणा-संवेदना भरी आखों

से आँसू बह निकलते थे, जिन्हें तुरंत सम्हालकर, स्वस्थ हो जाता था और हमारे देशभक्त पिताजी द्वारा बारबार सिखाये गये इस शिक्षापाठ को याद कर उठता था —

"दुःख से, सितम से पिघल कर रोने लगें,

उसके बजाय बेहतर है कि उससे सुलग उठकर लड़ने लगें ।"

एक बार की बात है ।

एक सितम सहनेवाले को उसने जब यह सुनाया तब वह बोल उठा —

"बिलकुल ठीक, एकदम बराबर । यही तो हम करने आये हैं ।"

"परंतु हमें हमारे मार्ग को बदलना है और अधिक कठोररूप से और तुरन्त ही लड़ना है" कीर्तिने कहा ।

"तो यह हम कैसे करें ?" उन लोगों ने पूछा । कीर्तिने उन्हें मार्गदर्शन दिया —

"आप लोगों में से कुछ लोग ऐसी घट रहीं घटनाओं की ज़मीनीतौर पर मूलभूत रूप में जहाँ वे घट रहीं हों उनकी सतत निगरानी रखेंगे और तुरन्त ही सूचना देंगे । दूसरा ग्रुप लगातार नज़र रखेगा 'रेड लाइट एरिया' पर और तीसरा ग्रुप सदा ही तैयार - Everyday रहेगा लड़ने के लिये उन अपहरण-कर्ता गुंडों के साथ — फिर चाहे कितने भी बलशाली वे क्यों न हों और उनके पंजों से उन निरीह बेगुनाह बालाओं को छुड़ाकर, बचाकर, मुक्त करेगा ।" "बराबर है, कीर्ति बाबु ।" समर्पित क्रान्ति-कार्यकर्ताओंने दृढ़तापूर्ण उत्तर दिया ।

"लेकिन ख्याल रखें — आप सभी को बड़ी सावधानी से काम करना होगा और सब के ऊपर ऐसी छुड़ाई गई - मुक्त की गई बालाओं को आपकी बहन-बेटियों की तरह मानना और सम्हालना होगा, अपना चरित्र शुद्ध रखना होगा । उन्हें तुरन्त ही उन के रोते-तड़पते माता-पिताओं तक पहुँचाना होगा ।" कीर्तिने उन्हें सावधान किया ।

"बाबुजी, हम भगवान के नाम से सौगन्द लेते हैं कि हम आप की इच्छा और कहने के मुताबिक पूरा का पूरा काम करेंगे ।" एक ने सम्मति दी, जब कि दूसरे को दूसरे प्रकार की शंका थी :

"यह सब हम करेंगे ही, लेकिन एक खुलासा...."

"हाँ मनीराम ! संकोच मत रखो, मुझ से कहो, क्या स्पष्टता तुम चाहते हो ?"

कीर्ति ने पूछा और उस बहादुर बाहुबली ने अपनी शंका बेधड़क रखी :

"बाबु.... ! आपसे हमने पूरे दिल से नहीं मारने का अहिंसामार्ग अपनाया है, लेकिन अपहरण की गई और बंदी बनाई गई बालाओं को बचाने और गुंडों की चुंगल से छुड़वाने के जंग के दौरान हमें भारी लोहा लेकर लड़ना पड़ सकता हैं । इसमें कभी कभी क्रूर अपहरणकर्ताओं का काम तमाम भी कर देना पड़ सकता है, मौत के घाट तक उतार देना पड़ सकता है । और आप अहिंसा पर ज़ोर दे रहे हैं ।"

कीर्ति ने बेधडक स्पष्ट किया —

"ऐसे किसी अपवाद रूप किस्से में अगर आपकी अहिंसा कामयाब न बन सके तो (अपवाद के रूप में) मातृशक्ति की शीलरक्षा करने की उमदा परिस्थिति में, आपको हिंसा करनी पड़े तो वह न कोई अपराध है, न पाप । एक बड़े जैन आचार्य ने भी एक अपहरण की गई साध्वी को बचाने, मुक्त कराने हेतु शस्त्र उठाये थे – अपने हाथों में तलवार उठायी थी और उसे छुड़ाया था ! हमारी अहिंसा कायरों की नहीं, वीरों की है । इस लिये मेरे बहादुर दोस्त ! चिंता मत करो । तुम आगे बढ़ो । अगर ऐसा समय आता है तो मैं भी तुम्हारे साथ जुड़ जाऊँगा ।"

"कीर्ति बाबु । आप का शुक्रिया । सारी बातें साफ़ हो गईं.... अब कृपा करके मेरी धनराशि आपके उमदा कार्य में उपयोग में लेने हेतु स्वीकार करें ।" मनीराम ने प्रार्थना की ।"

"हम अब उस का स्वीकार करेंगे । परंतु वह दूसरे ढंग से होगा । आप ही उस धन के कस्टोडियन बनेंगे । आप उसका उपयोग सहाय के तीन रास्तों से करेंगे ।" कीर्ति ने नया मार्ग निकाला और मनीराम ने पूछा : किस प्रकार ?"

"प्रथम आप अपने खुद के परिवार को एवं हमारे सारे कामगारों को सहायता करेंगे – खास करके बिहार के : बिहार-महावीर, बुध्ध और जयप्रकाशजी की पवित्र भूमि : जिसे मैं वंदन करता हूँ । कीर्ति ने स्पष्टता की । मनीराम को तुरन्त ही रुपयों के नॉट सभी में वितरण हेतु निकालते हुए देखकर कीर्तिने आगे स्पष्टता करते हुए सलाह दी :

"दूसरा, आप पैसे अपने खुद के वतन बिहार के गाँव के गरीब से गरीब लोगों को भेजेंगे – उन पैसों से अपने छोटे-छोटे गृह उद्योगों को शुरु करने के लिये ।"

"बिलकुल ठीक है ।"

"और तीसरा, पैसों का एक तिहाई भाग जब ज़रुरत पड़े तब अपहरण की जाती बालाओं को बचाने और सहाय करने के लिये रखेंगे ।"

कीर्ति के गरीबों को मदद करने के ऐसे असाधारण और अनूठे उपायों, मार्गों और मिशन से मनीराम और सभी कामगार बेहद खुश हो गये, क्योंकि ऐसा तो उन्होंने कभी सोचा, माना न था ।

इस खुशी के माहौल में कीर्ति के द्वारा प्रथम बताया हुआ मार्ग शीघ्र ही अपनाया गया । सारे ही साथी कामगारों को खुले हाथ से धन बाँटा गया । ज़िंदगी में ऐसा तो उन्होंने सोचा ही नहीं था कि उदार देनेवाला और दीन-दुःखी लेनेवाले सभी आनंदित होकर कीर्ति का धन्यवाद ही नहीं उसे अपने सर आँखों पर बिठाने लगे । अपने लिये कुछ भी नहीं लेनेवाला और सभी को सुखी कर देने का, 'दानं संविभागः' का मार्ग दिखानेवाला करुणात्मा कीर्ति उन सबका सच्चा क्रान्ति-नेता क्रान्ति-सरदार बन गया था ।

सभी आजतक के अभावग्रस्त कामगार अपने अपने स्वजनों को वतन में तुरन्त मनीआर्डर भेजने लगे ।

.... और इस प्रकार, जिसकी लंबे अर्से से प्रतीक्षा की जा रही थी ऐसा कीर्ति का 'संपन्नतावाद' का निराला, सभी का सुख-कर्ता, नूतन क्रान्ति निर्माता, मिशन और क्रान्ति-आंदोलन का शुभसंकेत

भरा प्रारम्भ हो गया । मनीराम का उदार दिल का दान, प्रथम भूमिदान बाद विनोबा को देनेवाले रामचंद्र रेड्डी की थोड़ी सी स्मृति दिलाने लगा । यह तो अभी एक छोटे-से छोटा, परंतु ठोस आरम्भ था । अभी तो उसे अनेक बड़ी बड़ी ऊंचाइयाँ प्राप्त करनी थीं ।

इस क्रान्ति-मिशन में अनेक अन्य आयाम और कार्यक्षेत्र थे । इन में घूसखोर बाबुओं और उनके आश्रयदाता मिनिस्टरों से, फिर रिश्वत विरोधी-सरकारी विभागों के कर्मचारी ही से और बाद में रात्री के अंधेरे आलम के, बालाओं के लहू के पिशाची व्यापारी गुंडों से लोहा लेना, जंग छेड़ना, आदि शामिल था । ये सारे बड़े किमती और जोखिम भरे क्रान्ति काम मांगते थे अर्थशक्ति (Money power) और मानवशक्ति (Man-power), जो दोनों ही कीर्ति की टीम के पास बहुत ही मर्यादित थे । परंतु उनके पास जो भी थोड़े संसाधन थे वे अपनी फैक्ट्री के काली मेहनत मजदूरी की छोटी-सी आय आदि के, वे सारे दुर्लभ थे और सदाकाल के संनिष्ठ क्रान्ति-साधकों के लिये दिशा-दर्शक समान थे । अपनी ही मेहनत के, नेकीभरी मेहनत के, और बिना भीख या बिना दान के चलनेवाले कीर्ति के क्रान्ति-कार्य अब धीरे धीरे रंग ला रहे थे । मनीराम जैसे परिवर्तित बाहुबली अब उदार दिल दाता और अहिंसक वीर योद्धा बनकर उभर रहे थे और कीर्ति के क्रान्ति-कार्य में नींव के पत्थर बनने जा रहे थे । इस उपक्रम में घटी हुई अनेक जोखिमभरी क्रान्तिमिशन की घटनाओं में से एक दो उल्लेख करने योग्य हैं ।

कीर्ति ने अपने लिये अपना बदला हुआ नाम 'क्रान्तिकुमार' रखा था । 'क्रान्ति काठियावाड़ी' के नाम से भी वह अपने छोटे गुप्त, भूगर्भ वर्तुलों में जाना जाता था । कभी कभी गुंडे लोग भी उसका यह गुप्त नाम जान लेते थे और कीर्ति की समर्पित, सिध्धांतनिष्ठ, नेकी भरी चुनी हुई - तालीमबद्ध क्रान्ति टीम से डरे हुए रहते थे । पूर्व सूचनानुसार कीर्ति की यह टीम चुने हुए, तालीमप्राप्त, चकासे गये थोड़े संनिष्ठ समर्पित फैक्ट्री-कामगारों और अन्य साथियों से बनी हुई थी । टीम को शुरु में कोई नाम नहीं दिया गया था, परंतु इस क्रान्ति टीम के साथियों ने कीर्ति को ऊपर कहे नामों से बढ़कर "सरदार" का नाम दिया था, जो कि हकीकत में अपने पहले क्रान्ति-गुरु निर्माता सरदार पृथ्वीसिंह (स्वामीराव), शहीद वीर भगतसिंह के पूर्वकथित अनुयायी के ही कदमों पर चल रहा था । शुरु से ही बड़े ही समर्थ और मज़बूत बने हुए इस छोटे से क्रान्तिदल ने ऐसी धाक कलकत्ते के अंधेरे आलम में जमाये रखी थी कि बड़े बड़े गुंडे भी उससे डरते थे । "सरदार" अथवा "कीर्ति" । क्रान्ति काठियावाड़ी" का नाम ही उनके भाग जाने के लिये काफ़ी था ।

बहुत बार कीर्ति के उपर्युक्त चुनंदा समर्पित क्रान्तिसाथी, गुनाहित प्रवृत्तियाँ करनेवालों को देर रात तक घूमकर पकड़ते या भगा देते थे । इनमें असामाजिक तत्त्व, स्मगलर, कालेबाज़ारी, लहू के व्यापारी आदि सभी लोग होते थे । पुलीस उन तक पहुँचे या न पहुँचे, यह टीम, कभी तो अपने "सरदार" कीर्ति को अपने कंधों पर पालखी-वत् उठाकर, हावड़ा के बड़ा बाज़ार की छोटी छोटी सॅकरी गलियों में और लहू का व्यापार करने वाले 'रेड लाइट' एरिया तक पहुँच जाती थी । उपरोक्त अपराधी लोग 'कीर्ति काठियावाडी' के लोगों के आने की भनक पड़ते ही अपनी

गुनाहित गुप्त-प्रवृत्तियाँ छोड़कर भाग छूटते थे । भाग जाते हुए ये अपराधी लोग - बहुधा स्मगलर्स, गैरकानूनी व्यापारी एवं विशेषकर गुप्त बम-उत्पादक आदि यह धारणा रखते थे कि कीर्ति की टीम के पीछे पुलिस भी साथ आ रही है । इस आशंका और भय के कारण वे अनेक बार जल्दी जल्दी में अपना भयातंकित गुनाहित सामान या तो साथ ले छूटते थे या किसी के स्थान पर छोड़ आते थे, या फैंक भी देते थे । जब वे ऐसा गैरकानूनी सामान दूसरों के स्थान पर छोड़ आते थे, तब ऐसे स्थान मालिकों के लिये स्वाभाविक ही भयानक और जोखिमभरा बन जाता था ।

एक बार सचमुच ही ऐसी घटना घटी ।

अभी तो रात बीती नहीं थी और अंधेरा छाया हुआ था । लगभग सभी लोग सोये हुए थे और बाज़ार की दुकानें, गोदाम, ऑफिसें सब बंद थे । एक अनजाना गुप्त, भेदी राहदारी अपने बारुदी सामान से भरे हुए पार्सल को सर पर उठाकर आता है महानगर के मध्य के अमरतला स्ट्रीट में, चढ़ जाता है, जहाँ नीचे दुकानें थीं ऐसी एक निवासी कोठी की पहली मंज़िल पर । उस माले के सभी निवासी अब तो सोये हुए थे, लेकिन एक चाय के व्यापारी मेसर्स मनोरदास शाह एन्ड कंपनी का सुबह जल्दी उठनेवाला कर्मचारी मि. कपिल जागा हुआ था । माथे पर गठ्ठा धरा हुआ वह अनजान भेदिया राहगिर उसे अर्ज़ गुज़ारता है कि पडौसी मेसर्स रतिलाल कंपनी वालों को यह पार्सल सौंपना है और वह बंद होने से थोड़ी ही देर उसे अपने आफिस में रखने दें, जो कि वह खुद कुछ समय बाद वापिस आकर पहुँचा देगा । यह कहकर सामनेवाला उसकी स्वीकृति दे या न दे इस बात की परवाह किये बिना वहाँ रखकर चंपत हो गया ! वास्तव में मनोरदास शाह एण्ड कंपनी का यह ऑफिस संयोग से हमारे मित्र श्री मनुभाई शाह का ही था और उनका पुत्र राकेश उस दिन सुबह किसी खास काम से वहाँ जल्दी ही पहुँचा था । उसके प्रवेश करते ही कपिल ने उसे वह अनजाना पार्सल बतलाया । बीत रही रात और आ रहे भोर के समय ही योगानुयोग से कीर्ति भी वहाँ आ पहुँचा जो कि बारंबार वहाँ अपने डाकपत्रादि प्राप्त करने और मनुभाई से मिलने आ जाया करता था । हम भी दूर से अपने पत्र आदि इसी पते पर भेजा करते थे । आज तो वह कुछ जल्दी ही मुँह अंधेरे आया था ।

आते ही उसने उस भेदी पार्सल को देखा । उसकी पैनी सूझ और चौकन्नी नज़र ने तुरन्त ही उसमें भरे हुए रहस्यमय बारुदी सामान को भाँप लिया । उसे छोड़ जानेवाला भेदिया राहगिर, जो कि वापिस लौटे ऐसी सामान्य संभावना नहीं होती थी फिर भी इन सब के सद्‌भाग्य से, वहाँ पार्सल उठा ले जाने आ पहुँचा । उस जिद्दी और खूंखार भेदिये से कीर्ति ने जबरदस्ती वह पार्सल खुलवाया और अपने अंदाज़वाला भयानक बारुदी पदार्थ ही उसमें पाया । आजुबाजु के कुछ लोग भी जमा हो गये थे । उसे भेदी आदमी को भाग छूटने का मौका दिये बिना कीर्ति ने तुरन्त ही अमरतल्ला स्ट्रीट की निकट की पुलिस को बुलाकर इस अपराधी और उसके भयातंकित सामान को सौंप दिया । इस प्रकार कपिल, राकेश और मनुभाई को इस अनावश्यक, गंभीर होनी और उसमें होनेवाले फिज़ूल के पचड़े से बचा लिया । आज भी कपिल उस पुरानी घटना का आँखों देखा हाल हूबहू वर्णन कर सुनाता है और कीर्ति की अनुभवपूर्ण दूरंदेशी बुद्धि को अपनी अंजलि देता है ।

कीर्ति ने उस प्रभात को वहाँ से पाये हुए अपने डाक-पत्रों में दो खास पत्र प्राप्त किये — एक अपने बड़े बन्धु चंदुभाई का बेंगलौर से और दूसरा मेरा हैदराबाद-आंध्र से । अति ही संवेदनशील, स्नेहपूर्ण और उदार-दिल चंदुभाई कीर्ति के लिये सदा ही मुझ से भी अधिक चिंतित रहते थे और हमारी पू. माँ की चिंता और आँसूभरी विरह-व्यथा व्यक्त करते रहते थे । इस बार उन्होंने कीर्ति को भरपूर प्रेमपूर्वक पत्र में लिखा था :—

"मुझे प्रताप के द्वारा यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि तुम्हारा छोटा फैक्ट्री युनिट अच्छा कार्य कर रहा है और खासकर नैतिक, नीतिमय स्वरूप में । तुम्हारे भीतर अथाह कार्यशक्ति, सामर्थ्य और उठाये हुए किसी भी कार्य को संपन्न करने की इच्छाशक्ति (will power) है । परंतु तुम ऐसा कार्य यहाँ बेंगलौर, हैद्राबाद या शारदाग्राम में क्यों नहीं आरम्भ करते ? इससे तुम हमारे निकट भी रह सकोगे और पूज्य माजी की चिंता भी दूर होगी । हम सभी तुम्हें अभी जो कुछ थोड़ी सी सहायता यहाँ से कर रहे हैं उससे अधिक कर पायेंगे ।

".... विशेष में कलकत्ता हड़तालों और कॉम्युनिस्टों एवं कोमवादियों के बारबार हो रहे उपद्रवों का 'तूफानी-शहर' है.... इसलिये तुम्हारे और सभी के हित के लिये देर से या जल्दी से मेरे इस सुझाव पर अवश्य विचार करना । माँ तुम्हारे लिये हृदय के आशीर्वाद भिजवाती है । अपनी फुर्सत् पर उत्तर लिखना और तुम्हें किसी भी प्रकार की सहायता चाहिये तो संकोच मत करना ।

प्रेमभरे चंदुभाई के आशीष ।"

मेरा पत्र भी कीर्ति की नई प्रवृत्ति की अनुमोदना करता था । कीर्ति में माँ के प्रति अपार भक्ति एवं हम सभी बंधुओं के प्रति पूज्यभाव था । "प्रेमल ज्योति" के, 'हे प्रभु !' के एवं "अपूर्व अवसर" के प्रार्थना-पद वह अपनी प्रवृत्तियों के बीच से भी सदा स्मृति में रखता था । जब जब वह हमारे पत्र पाता था तब तब वह बड़ा भावुक हो उठता था, परंतु उसके दृढ़ निर्धार, अंतर्ग्रस्तता-अंतर्व्यस्तता और भूगर्भ प्रवृत्ति आदि सब भिन्न थे । हृदय से चाहते हुए भी वह इन-से मुक्त नहीं हो सकता था संकल्पबद्धता उसकी विशेष प्रकृति बन चुकी थी । हम सब भी उसकी उस समय की इन परिस्थितियों, प्रवृत्तियों एवं अंतर्स्थितियों से तब जानकार नहीं थे ।

इस लिये कीर्तिने अपनी सारी विनम्रता एवं पूज्यभावपूर्वक हम दोनों बंधुओं को अलग-अलग पत्र लिखकर माँ और चंदुभाई की इच्छाओं को पूर्ण करने की भावना तो दर्शाई, परंतु साथ साथ संक्षेप में यह भी सूचित किया कि जल्दी वह संभव नहीं था, क्योंकि उसने कुछ लक्ष्य-निर्धार कलकत्ता में ही पूरे करने का संकल्प किया था । (क्रमशः)

क्रान्तिकार कीर्तिकुमार के कलकत्ता के क्रान्तिमय जीवन की करुणकथा

परिशिष्ट-A : कीर्ति के क्रान्तदर्शी करुण पत्र

(१) १२-३-१९५९, ननिहाल धारी (सौराष्ट्र से)

(२) १३-३-१९५९, ननिहाल धारी (सौराष्ट्र से)

(३) १४-३-१९५९, ननिहाल धारी (सौराष्ट्र से)

परिशिष्ट-B : (मूल गुजराती से) कीर्ति की साधना-सिद्धि दर्शक-परिचायक अभूतपूर्व जिनशासनदेवता का प्रत्यक्षीकरण प्रसंग :

हेद्राबाद २३-१०-१९५९

परिशिष्ट-C : आचार्य विनोबाजी को पत्र एवं पत्रोत्तर

६-१२-१९५९, ३०-१२-१९५९

परिशिष्ट-A

कीर्ति के क्रान्तदर्शी करुण पत्र

परिशिष्ट-B

क्रान्तिवीर कीर्ति की अधूरी साधना-सिध्धि का दर्शक-परिचायक

अभूतपूर्व जिनशासनदेवता का प्रत्यक्षीकरण प्रसंग

(दैवी वार्तालाप में स्वयं के एवं परिवारजनों के कई अद्भूत निजी रहस्यों-सत्यों का उद्घाटन)

हैदराबाद : २३-१०-१९५९

सं. २०१५ के अश्विन मास के कृष्ण पक्ष की छठ, शुक्रवार दि. २३ अक्तूबर १९५९ की संध्या.... हैद्राबाद (आन्ध्र) के उस्मानिया अस्पताल के स्पेश्यल वोर्ड का अलग कमरा... । पलंग पर शांत अवस्था में सोया हुआ कीर्ति, सामने प्रतिक्रमणवत् ध्यान में बैठी हुई माताजी और पलंग के निकट कुर्सी पर बैठा हुआ मैं । सामने वाली खिड़की में से दिख रहे हैं संध्या के फैलते-बिखरते रंग, छाने लगा है अन्धकार, मन्द पड़ने लगा है पंछियों का कलरव और सब कुछ स्तब्ध होता जा रहा है ।

"प्रतापभाई - 'प्रेमळ ज्योति' भजन गाइये ना !" अचानक कीर्ति बोल उठा और मेरे आर्द्र हृदय से और व्यथित कंठ में से 'प्रेमळ ज्योति', 'अपूर्व अवसर' और एक दो अन्य भजन निकलने लगे... जिसे सुनते सुनते कीर्ति की आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी और उसी अवस्था में वह निद्राधीन हो गया, लेकिन उस बात की ओर मेरा ध्यान ही न था । कुछ क्षणों के बाद दर्दभरी वाणी में वह कुछ बोलने लगा "मैं गिरनार जाऊँगा.... भरतवन और शेषावन जा कर साधना करूँगा..."

इन शब्दों को सुनकर मुझे और माँजी को ऐसा लगा कि कीर्ति स्वप्न में बड़बड़ा रहा होगा ! परन्तु कुछ क्षणों के बाद तो उसके चेहरे पर वेदना एवं किसीको ललकारने के मिश्रित भाव दिखाई दिये... मानों किसी के साथ वह झगड़ना चाहता हो उस प्रकार उसके हाथ हवा में उछलने लगे और अत्यंत आवेश के साथ वह बोलने लगा....

"आपने मुझे उत्तर क्यों न दिया ? मुझे इतना परेशान क्यों किया ? मेरे काम में मुझे सफलता न मिली, मेरे पैसे गये, कठिनाइयाँ आईं और मैं इतना बीमार हो गया... । मैंने किसी धनप्राप्ति की लालसा से आपके नाम का जाप नहीं किया था, कलकत्ता में मेरे काम में मुझे सफलता प्राप्त हो इस हेतु से किया था... ।"

कुछ क्षणों के बाद मानों कीर्ति के मुख से ही कोई और ही बोल रहा था... "शांत हो जा, शांत हो जा, बेटे ! मैंने तुझे परेशान नहीं किया है ! तेरा २१ दिन का जाप पूर्ण हुआ नहीं था, लेकिन उस कारण से तूने परेशानियाँ नहीं उठाई हैं.... अपने अपने कर्मों के कारण सब...."

इस प्रकार अलग स्वर में ही कोई उत्तर दे रहा हो ऐसा सुनाई दे रहा था । मुख कीर्ति का ही, आवाज़ किसी और की ! लेकिन वहाँ और तो कोई दिखाई नहीं दे रहा था । हाँ, वातावरण अत्यंत गंभीर हो गया था । माँजी और मैं आश्चर्य सहित उसे पूछने लगे :

"किसके साथ बात कर रहे हो कीर्ति ? सपना देख रहे हो क्या ?....." इत्यादि ।

"नहीं, नहीं, सपना नहीं है, देव आये हुए हैं, श्री घंटाकर्ण महावीर.... ।" यह उत्तर देते हुए कीर्तिने स्पष्टता की कि तीन वर्ष पूर्व कलकत्ता में उसने नौ दिन उपवास कर के नवकार मंत्र का जाप किया था और जैन शासनदेव श्री घंटाकर्ण महावीर की साधना की थी ।

उस अंधेरे कमरे में मैंने लाईट चालु की तो तुरंत कीर्ति बोल उठा :

"बत्ती बंद कर दीजिये, देव को बत्ती पसंद नहीं है । अगरबत्ती जला कर टेबल पर रखिये और बैठ जाइये । देव अभी यहाँ पर खड़े हैं । आप चुपचाप बैठे रहें, मैं उनसे प्रश्न पूछना चाहता हूँ ।"

हम उसकी इच्छा और सूचना के अनुसार लाइट बंद करके अगरबत्ती जलाकर बैठ गये । कुछ क्षण नीरव-निःशब्द व्यतीत हो गये । कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था लेकिन कोई मानवेतर तत्त्व की उपस्थिति का कुछ भिन्न प्रकार का अनुभव हो रहा था । कुछ क्षणों के बाद अत्यंत मन्द स्वरों में कीर्ति के शब्द सुनाई देने लगे :

"लिवर-एक्सट्रैक्ट बंद कर दिया जाये.... । लिख लो प्रतापभाई ! देव जो कह रहे हैं वह लिख लो... । मेरे रोग के लिए कह रहे हैं... लिखो (१) लिवर एक्स्टैक्ट बंद कर दिया जाये... (२) 'नेचर क्योर' में उपचार किया जाय (३) अन्त में 'आयंबिल' करने से रोग चला जायेगा... ।"

यह सुनकर आश्चर्यचकित-सा मैं, त्वरा से, हाथ में जो भी कागज़ आये उन्हें उठाकार अन्धेरे में ही लिखने लगा । कीर्ति लिखाता रहा...

"माँजी का आयुष्य अगले मार्च से दस साल है.... "

"हम सभी भाइयों के साथ 'क' का सम्बंध स्वार्थपूर्ण है ।

"चन्दुभाई अत्यन्त संवेदनशील, भावनाशील व्यक्ति हैं । उन्होंने मेरा हित ही चाहा है, लेकिन मैं ही समझ नहीं सका हूँ ।"

इतना कहने के बाद कीर्ति ने हमसे कहा, "अब अगर आप देव से कोई प्रश्न पूछना चाहते हों तो पूछिए.... ।" और हमने प्रश्न पूछना शुरु किया । शुरु में मैं कुछ तर्कबुद्धि से पूछ रहा था, इस घटना पर श्रद्धा नहीं जाग रही थी मेरे मन में, केवल विश्वस्त होने के लिए पूछने की इच्छा हो रही थीं । मैंने आरम्भ किया और फिर माँजी ने भी पूछना शुरु किया । हमारे प्रश्न पूछने के बाद कीर्ति लेटे लेटे ही हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर मन में ही देवता से प्रश्न पूछता, उसकी यह मौन अवस्था कुछ क्षणों तक रहती और देवता से जो उत्तर प्राप्त होता वह हमें सुनाता और लिखाता था । लिखवाते समय उसका बोलने का ढंग, उसकी भाषा और वाणी का प्रवाह इतना तो विश्वास ज़रुर कराता था कि कोई असामान्य व्यक्ति उसे माध्यम बनाकर उसके द्वारा बोल रहा है, उत्तर दे रहा है । एक के बाद एक प्रश्न इस प्रकार हुए और ये उत्तर मिले :-

मैं (प्रताप) : मेरे बारे में देव क्या कहते हैं ?

उत्तर : आप दिल से पापी - बुरे नहीं हैं ।

प्र. : मैं पिछले जन्म में कौन था ?

उत्तर : पिछले जन्म में आप योगभ्रष्ट हिन्दु योगी थे । योग की साधना करते करते आप भ्रष्ट हुए थे । भ्रष्ट होने के बाद आप जैन साधुओं के सम्पर्क में आये और इसी कारण से इस जन्म में आपका जैन कुल में जन्म हुआ ।

प्र. : मैं योगभ्रष्ट क्यों और कैसे हुआ ?

उत्तर : कोई कोई मनुष्य अनेक जन्मों में योग की साधना कर के एक अन्तिम क्षण पर योगभ्रष्ट होता है और कोई सम्पूर्ण जीवन व्यर्थ गँवा कर भी अन्तिम क्षण पर जीवन सफल बना लेता है... अतः आप स्वयं पर संयम रखें । योग के लिए बहुत थोड़ा ही समय है ।

प्र. : मुझे संयम की साधना किस प्रकार करनी चाहिए ?

उत्तर : जैनों का मार्ग योग... आप जैन हैं । किसी तीर्थंकर के जीवन चरित्र पर दृष्टि डालें ।

प्र. : मेरी विद्या साधना सुंदर ढंग से क्यों नहीं हो रही है ?

उत्तर : आपका मन चंचल है । आप चाहते हैं कुछ, और उस समय आपको करना पड़ता है कुछ और । आप स्थिरतापूर्वक, ईश्वर पर श्रद्धा रखकर प्रतिदिन नवकारमन्त्र की नौ माला फेर कर काम आरम्भ करें । आप में विद्या अच्छी है ।

प्र. : दीपावली से मैं स्थिरतापूर्वक विद्यासाधना करना चाहता हूँ । जो काम हाथ पर लिया है उसमें पूर्ण सफलता प्राप्त करना चाहता हूँ, उसके लिए परिश्रम करने का स्पष्ट मार्ग बतायेंगे ?

उत्तर : इसके लिए भगवान ने (देव ने) सरस्वती का मन्त्र दिया है –

'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं वद् वद् वाग्वादिनी स्वाहा'

इस मन्त्र का जाप, शुद्ध वस्त्र पहन कर, अपने आसपास एक वर्तुल बनाकर, नवकार मन्त्र की नव माला फेर कर, बाद में करें । इसके बाद शांतचित्त से एक एक विषय का अभ्यास करें । वैसे तो सरस्वती देवी का जाप एक लाख इक्कीस हजार बार करना चाहिए । परन्तु आपसे यह पूर्ण हो नहीं सकेगा, इसलिए रोज एक माला फेर कर अभ्यास करें । प्रथम नवकार की नव माला और बाद में यह माला, फिर उसी आसन पर बैठ कर अभ्यास - प्रतिदिन इतना करें । अन्य कार्यों के बहाने माला न चूकें । विद्याप्राप्ति हेतु सरस्वती का यह जाप आपको सहायता करेगा, नवकार के जाप से विघ्न दूर होंगे और आप स्थिरतापूर्वक अभ्यास कर सकेंगे । सफलता की प्राप्ति हेतु तो जितना परिश्रम करेंगे वैसा परिणाम होगा । 'कर्मानुसार गति प्राप्त होती ही है' ऐसा जैन शास्त्र ही कहते हैं ।

भविष्य में आपको विदेश जर्मनी जाना होगा.. (देव कहते हैं कि) जर्मनी जायें तो धर्म को - जैन धर्म को छोड़कर माँसाहारी न बनें, मदिरापान न करें एवं धर्मविरुद्ध कोई कार्य न करें ....।

प्र. जैन धर्म के अनेक ग्रन्थ तथा प्राचीन आर्य साहित्य जर्मनी में है ऐसा सुना हैं । तो आपके कथनानुसार अगर जर्मनी जाने का अवसर प्राप्त हो तो जैनधर्म से संबंधित कोई खोजकार्य हो सकेगा ?

उत्तर : श्रद्धा और परिश्रम किया जाय तो सब कुछ अवश्य होगा ।

प्र. वर्तमान समय में सभी तीर्थंकरों के जीवनचरित्र उपलब्ध नहीं हैं । यह बताएंगे कि ये कहाँ से और किस प्रकार खोजे जा सकते हैं ?

उत्तर : चरित्र-ग्रन्थ अगर सच्चे, सम्पूर्ण चाहिए तो अगाध परिश्रम करना पड़ेगा । प्राचीन यात्रा-स्थानों में, बेंग्लूर के पास दिगम्बर क्षेत्रों में तथा शत्रुंजय (पालीताणा) के पास ये सब अज्ञात दशा में दबे हुए पड़े हैं । ये ताड़पत्र की पतली पट्टियों में अनेक भाषाओं में लिखे हुए हैं । कठिन परिश्रम के द्वारा ये प्राप्त होंगे । परिश्रम हेतु सिद्धायिका देवी की साधना करें ।

प्र. संगीत का भक्ति हेतु किस प्रकार उपयोग करना चाहिए ?

उत्तर : सुन्दर रूप से भक्तिपूर्वक तीर्थंकर का केवल एक स्तवन गाने से भी मनुष्य की आत्मा अत्यंत संतोष प्राप्त करती है और उस स्तवन में तन्मय हो जानेवाला अल्प तपश्चर्या के द्वारा भी कभी कभी मोक्ष पद की प्राप्ति कर लेता है ।

प्र. : मैं योगसाधना करना चाहता हूँ परन्तु शुद्धरूप से ब्रह्मचर्यपालन नहीं होता है... ।

उत्तर : आप गृहस्थ बनेंगे और विवाह कर के साधना करेंगे ।

प्र. : परन्तु मैंने तो पाँच वर्ष पूर्व आजीवन ब्रह्मचर्य का संकल्प किया है ।

उत्तर : आपने संकल्प किया था परन्तु विधिपूर्वक ब्रह्मचर्य व्रत धारण नहीं किया था, अतः उस विषय में कोई बात नहीं... ।

प्र. : परन्तु इस विषय का निर्णय श्रद्धेय सन्तजनों पर ही छोड़ दूँ तो उचित होगा ?

उत्तर : आप पूछेंगे तो सन्त तो 'हाँ' या 'ना' कहकर मार्गदर्शन करेंगे । वे कोई पात्र बतायें उसमें भी जैन कुल की कन्या होगी तो घर में थोड़े भी जैन संस्कार ले कर आयेगी... ।

यह पूरा वार्तालाप सुन रहीं माँजी ने अब बीच में पूछा –

"प्रताप के लिए ऐसी कन्या कहाँ से मिलेगी ?"

उत्तर : सौराष्ट्र में, हालार प्रदेश में से ।

प्र. : मैं पूरे परिवार को धर्मसाधना की ओर मोड़ना चाहता हूँ, इस के लिए मैं क्या करुँ ?

उत्तर : सब को धर्म की ओर मोड़ना मनुष्य के वश में नहीं, स्वयं महावीरस्वामी भी यह न कर सके । आप स्वयं करेंगे तो अन्य लोग भी स्वतः करने लगेंगे । थोड़ा समझायें यही हमारा कर्तव्य है ।

इस प्रकार प्रश्नोत्तर हो रहे थे । मैं पलंग के पास कुरसी पर बैठा था । पास ही टेबल पर अगरबत्ती जल रही थी । लिखते समय मेरा पैर टेबल को छू रहा था । अन्धेरे में भी यह देखकर कीर्ति बोल पड़ा – प्रतापभाई, आपका पैर टेबल को छू रहा है.... उसी टेबल पर देव सूक्ष्म रूप धारण करके बैठ गये हैं । उनके धनुष्य इत्यादि साधनों को आपका पैर छू रहा है जिससे अविनय हो रहा है, इसलिए जरा पैर (हटा लीजिए) ।

यह सुनते ही मैंने पैर हटा लिए । कीर्ति ने माँजी से कहा : माँजी, आप जो पूछना चाहती हो वह पूछिए ।'

माँजी : भगवान से पूछ कि मुझे धर्मध्यान में कुछ ध्यान क्यों नहीं रहता, ज़्यादा समझ में क्यों नहीं आता ?

माँजी ने पूछा और कीर्ति पूर्ववत् देवता को नमन कर के पूछता रहा :

कीर्ति : भगवान नहीं, 'देव' कहिये, 'भगवान' कहते हैं वह उन्हें अच्छा नहीं लगता है, क्योंकि वे तो भगवान के सेवक हैं । ... वे कहते हैं कि आपसे समझ के साथ धर्मध्यान नहीं हो सकता है फिर भी आपकी आत्मा का झुकाव धर्म के प्रति है ही । उस पुण्य के प्रताप से ही आपको सुपुत्रों की प्राप्ति हुई है । आपकी उन्नति का समय, पुत्रों का सुख इत्यादि देखने का समय इन दस वर्षों की अवधि मैं है जिससे आपकी आत्मा को शान्ति प्राप्त होगी और इस सुख के कारण धर्मविषयक आपके ज्ञान में वृद्धि होगी । आम के पेड़ पर फल आने में समय लगता है । अभी तो यथा सम्भव धर्मध्यान करते रहें । छः मास के बाद अपने आप ही प्रोत्साहन प्राप्त होगा । छः मास के बाद आपके जीवन में धर्मध्यान का योग अच्छा है ।

माँजी : चन्दुभाई के लिए धर्मध्यान के विषय में पूछ ।

उत्तर : चन्दुभाई को यद्यपि धर्मध्यान का योग प्राप्त नहीं होता है फिर भी उनकी आत्मा धर्मिष्ठ है अतः उनको सब का साथ प्राप्त होगा तो धर्म का योग मिलेगा ।

प्र. : चन्दुभाई के जन्माक्षर मिलते नहीं है जिस कारण से उनके विषय में अधिक जानकारी भी मिलती नहीं है, तो उनके जीवन के विषय में कुछ देव कहेंगे ?

उत्तर : वे मातापिता के आज्ञांकित पुत्र हैं, स्वभाव से अत्यन्त नम्र हैं, ईश्वर के प्रति गहन श्रद्धा है, धर्मध्यान के लिए समय प्राप्त न होने पर भी ईश्वर के प्रति आस्था है, दूर होते हुए भी निकट की कक्षा तक पहुँचे हुए व्यक्ति हैं । इस भव में उनकी आत्मा स्वयं धर्मध्यान नहीं कर पा सकने पर भी औरों को उसके लिए प्रेरित एवं सहाय कर सकती है ।

माँजी : चन्दुभाई को रोग, स्वास्थ्य विषयक तकलीफ क्यों रहती है ?

उत्तर : भवभव के कर्म हैं.... अब कट रहे हैं ।

माँजी : छोटी भाभी की बीमारी के विषय में पूछ, उनकी प्रसूति के विषय में समस्या है तो क्या करें ?

उत्तर : वे आयंबिल करें... बीमारी एवं प्रसूति के समय सावधानी एवं शुद्धिपूर्वक नमस्कार मन्त्र का जाप करवायें... सब कुछ अवश्य ठीक होगा ।

माँजी : घर में इन दिनों सब अस्वस्थ क्यों रहते हैं ?

उत्तर : धर्मध्यान से सब के रोग दूर होंगे । सब आयंबिल करें ।

माँजी : बड़े भाई के विषय में देव क्या कहते हैं ?

उत्तर : कुछ समय से उनके मन में धर्म के प्रति आस्था बढ़ रही है, समय में परिवर्तन हुआ है ।

माँजी : शरद, हर्षद और अन्य बालकों के विषय में...

उत्तर : (ग) महान धार्मिक था । वह दैवी आत्मा है, अतः अगर उसे योग्य वातावरण मिलेगा तो निश्चित रूप से धर्म की ओर मुड़ेगा । आगे, भविष्य में शरद का विद्या के मार्ग पर अच्छा विकास होगा । वह या तो साधु, महान विद्वान् या बहुत बड़ा आदमी बनेगा ।

(घ) दैवी आत्मा है, (च-छ) का धर्मज्ञान अच्छा है, परन्तु भविष्य में (छ) का धर्म का ज्ञान अधिक नहीं रहेगा । (ज-झ) को कुछ अंशों में धार्मिक संस्कार हैं । (झ) उच्च आत्मा नहीं है । (य) सामान्य है ।... (ढ़) भ्रष्ट है । जैनधर्म संबंधित सब प्रकार के (दूषित) कर्मों में लिप्त है ।

माँजी : उसमें से उसे बचाने का कोई उपाय ?

उत्तर : केवल एक ही उपाय है । उसकी माता वर्षीतप करें, भगवान के पास हाथ जोड़कर पुत्र के हित के लिए प्रार्थना करके माँग करे और वह घर वापस आ जाये तो वह बच सकता है... ।

माँजी : (ट) के विषय में ?

उत्तर : (ट) को धर्मज्ञान अच्छा है, परन्तु छल और कपट की वृत्ति बलवत्तर हो जाती है... । (ठ) की आत्मा सरल है ।

माँजी : क और ख के विषय में क्या कहते हैं ? (ख) की बुद्धि इतनी हठाग्रही क्यों है ?

उत्तर : क-ख का चित्त धर्मध्यान में नहीं है । क कपटी हैं । ख की बुद्धि का कारण पूर्व जन्म के कर्म हैं ।

माँजी : परन्तु वे मेरे.... हैं ना ! धर्म की ओर उनका झुकाव क्यों न हो ?

उत्तर : देव ना कहते हैं । पूर्वकृत कर्म हैं । पिछले जन्म में ख जैन न थे । पूर्व के किसी जन्म में नहीं मिले हुए संस्कार प्रथम बार पिता के घर में प्राप्त हुए, लेकिन श्वसुर गृह जाते ही इस दिशा में उनका विकास रुक गया । धर्म को अपनाने में अनेक बाधाएँ आती रहीं । जो स्वयं को अत्यधिक आधुनिक मानते हैं उनके संसर्ग के कारण पिता के घर में जो संस्कार प्राप्त हुए थे वे सब भी विस्मृत हो गये !

माँजी : मेरी बहन की मृत्यु बहुत पहले हो गई थी, उनकी आत्मा को शांति है ?

उत्तर : हाँ, वे शांति में हैं । वे तो धर्मनिष्ठ थीं । उनके नाम पर आयंबिल, प्रतिक्रमण या माला फेरने से उन्हें अधिक शांति प्राप्त होगी अतः माला, प्रतिक्रमण करें... ।

प्र. : अपने अन्तिम क्षणों में मेरे पिताजी पूर्ण नवकार मन्त्र अच्छी तरह से सुन नहीं सके थे, तो आत्मा को शांति है या नहीं ?

उत्तर : उनकी आत्मा अंत समय में नवकार सुनने के लिए अत्यन्त व्याकुल है, तड़प रही है । अन्तिम दिनों में वे शान्त एवं धर्मप्रिय बने थे लेकिन पूर्व के क्रोधी संस्कार के कारण उन्हें समकित की प्राप्ति नहीं हुई है, फिर भी बालकों के धार्मिक कार्यों के समय पर उनकी आत्मा उपस्थित रहती है ।

उनके लिए प्रतिदिन एक नवकार की माला करें ।

माँजी : काका-माँबाप[१] की आत्मा की सद्‌गति हो गई है या नहीं ?

उत्तर : उस आत्मा की गति अब तक हुई नहीं है । उनके लिए आपको जो स्थान बनाना है वह बनाकर उनकी वहाँ स्थापना कर के प्रति सोमवार को वहाँ दूध और दीप करें... ।

कीर्ति : देव कहते हैं कि काका-माबाप कल मेरे सपने में आयेंगे ।[२]

प्रताप : रेपल्ली की चिन्नम्मा माता कौन थीं ? उनकी दशा मुक्तात्मा के समान लगती थी तो क्या उन्हें मुक्ति प्राप्त हो गई है ?

उत्तर : वे मल्लीनाथ भगवान की तरह पूर्वजन्म में भ्रष्ट बने हुए साधु थे । अब तक उनकी मुक्ति हुई नहीं है । इस आरे में केवल चार ही मोक्ष हैं ।

प्र. मैं "क" के साथ के सम्बन्धों को खत्म करना चाहता हूँ, उसके लिए कौन-सा मार्ग लिया जाये ?

उत्तर : जैन हमेशा शान्तिपूर्वक ही समस्या का निवारण खोजता है, उग्र नहीं बनता । और हमें जीवन में जो मिलता है वह भी हमारे और उनके लेन-देन के सम्बन्धों के कारण ही । अतः शान्तिपूर्वक चलना चाहिए । संसारचक्र में रहना हो तो हँसते चेहरे से काम निकाल लेना चाहिए ।

इतना पूछने के बाद माँजी और मैं रुक गये । कीर्ति ने पूछा अब भी कुछ पूछना हो तो पूछ लीजिए... देव अभी भी यहाँ उपस्थित हैं... ।

---

१. टोलिया परिवार के एक पूर्वज, जिनकी किसी अपूर्ण इच्छा के कारण सद्‌गति नहीं हुई है ऐसा माना जाता है ।

२. दूसरे दिन दि. २४-१०-५९ की रात को काका-माँबाप कीर्ति को सपने में सर्प के रूप में दिखाई दिये थे (निसर्गोपचार अस्पताल, अमीरपेठ में) और उन्होंने कहा : "मेरी अब तक सद्‌गति नहीं हुई है । मैं चाहता हूँ तो मुझे कोई धूनी होने नहीं देता । सब कहते हैं कि तुम्हारा परिचायक चमत्कार बतलाईये, परंतु मैं चमत्कार क्या बतलाऊँ ? अमरेली में टोलिया परिवार में, एक आप के घर के सिवा सुखी कौन है ? और आप के घर के समीप मुझ से बड़ा देवता (धर्मदेवता) खड़ा है, जो मुझे वहाँ आने नहीं देता । मुझे और कुछ नहीं चाहिये । मेरी छोटी देहरी बनवाकर मुझे मूल स्थान पर बिठाईये और मुझे दूध देकर दीप प्रकटायें, जिससे मैं चला जाउंगा ।" ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

हमने कहा — नहीं, अब कुछ पूछना बाकी नहीं है ।

कीर्ति ने कहा : ठीक है, अब देव मेरे विषय में कहते हैं वह लिख लो प्रतापभाई !

मैंने पुनः लिखना शुरु किया । देवता का कथन कीर्ति धाराप्रवाह लिखवाता रहा —

"कीर्ति ! तुम बहुत सुखी होंगे । २१ दिन की माला-जाप कर लो । जाप के दौरान - २१ दिन लाल वस्त्र पहन कर, आम्रवृक्ष की लकड़ी के बाजठ पर आम्रवृक्ष की लकड़ी रख कर, उस पर स्वस्तिक बना कर, चावल रखकर, लाल कनेर के फूल रखकर धूप इत्यादि करो और नव माला फेरो ...।"

"नव मास तक पैसे लेने के लिए कलकत्ता नहीं जाना, २१ दिन का जाप पूर्ण होने के बाद, नव मास के बाद जा सकते हो ।"

कथन पूर्ण होने के बाद देव जा रहे हैं ऐसा लगा । "देव अब जा रहे हैं" कह कर दीनतापूर्वक एवं भक्तिभावपूर्ण चेहरे से कीर्ति नमन कर रहा था । आरंभ में देव के साथ कीर्ति ने झगड़ा किया था अतः उसके लिए क्षमायाचना करते हुए वह बोला "मैंने आपके साथ बहुत झगड़ा किया है, मुझे क्षमा करें... ।" और 'अरे ! तू तो बालक है, तुझसे कैसे झगड़ा किया जा सकता है ?' कहते हुए देव बिदा हुए । हम भावविभोर कीर्ति को देवता के देखाव के विषय में पूछने लगे । उत्तर में उसने अपनी बदली हुई, सामान्य आवाज़ में कहा, 'लाल वर्ण, लाल लंगोट, मस्तक पर मुकुट, बगल में सर्प और दूसरी बगल में सिंह और हाथों में धनुष्य और बाण थे... ।'

इस प्रकार कहने के बाद थोड़ी देर में कीर्ति सो गया और हम भी इस प्रसंग के विषय में स्वस्थतापूर्वक चिन्तन करते करते, कुछ आश्चर्य, कुछ धन्यता, कुछ जागृति और कुछ कुछ अंशों में अन्यमनस्कता का अनुभव करते हुए निद्राधीन हुए ।

दूसरी सुबह कीर्ति पर मानों कोई बलवत्तर प्रेरणा कार्य कर रही थी जिसके फलस्वरूप उसने दवाइयाँ लेने से स्पष्ट इनकार कर दिया और तुरन्त उसे निसर्गोपचार केन्द्र Nature cure Hospital पर ले जाने के लिए आग्रह करने लगा । विचार करने पर हमें भी वही प्रेरणा बलवती और श्रेयस्कर प्रतीत हुई और हम तैयारी करने लगे । टैक्सी बुला ली और एक घंटे में ही वहाँ से सीधे अमीरपेठ जाने के लिए रवाना हो गये । जाते समय कीर्ति ने उस अस्पताल के (मूलतः उस्मानिया अस्पताल) उद्दण्ड, विवेक एवं प्रेम विहीन, पत्थर दिल एलोपैथ डोक्टर पर चिट्ठी लिखी :

"डोक्टर साहब,

आपके द्वारा की गई मेरी चिकित्सा के लिए धन्यवाद । ईश्वर की प्रेरणानुसार अपनी खुशी से मैं यह अस्पताल छोड़कर जा रहा हूँ । ईश्वर ही मेरा ध्यान रखेंगे । ईश्वर से महान इस विश्व में और कोई शक्ति नहीं है ।

— कीर्तिकुमार"

(गुजराती से अनुवाद : श्रीमती सुमित्रा प्र. टोलिया)

परिशिष्ट-C

आचार्य विनोबाजी को पत्र एवं पत्रोत्तर

प्रति
पू. विनोबाजी,
द्वारा, पंजाब सर्वोदय मंडल,
करनाल (पंजाब)

प्रेषक :- प्र. द्वारा,
नादानन्द बापूरावजी, सितार मास्टर
श्री हनुमानमंदिर, नारायण गुड़ा,
हैदराबाद-१ (आंध्र), ६-१२-५९

परम पूज्य बाबा ।

अनेकशः प्रणाम ।

मुझे बड़ा दुःख है कि आपके २३.८.५९ के पत्र का मैं आज प्रत्युत्तर दे पा रहा हूँ । मुख्य कारण मेरे छोटे भाई की बीमारी और साथ साथ उसकी एक महीना पूर्व ५.११.५९ को असमय ही "करुण" मृत्यु ... ! आप से प्राप्त दृष्टि दान के कारण इन दिनों शांत समभावी और स्वस्थ रहने का प्रयत्न तो किया है, परन्तु दिवंगत अनुज का आद्यान्त करुण और परोपकारपूर्ण जीवन एक ऐसी वेदना दे रहा है जो व्यक्त करने में असमर्थ हूँ । यहाँ कुछ लिखने का उद्देश आप से अगर समाधान पा सकूँ तो कृतकृत्य बनूँ, यह है । और यह समाधान भी मेरे अपने स्वार्थ के लिए नहीं, अनुज के दुःख की वेदना को विश्ववेदना में परिणत करने का मार्ग प्राप्त करने के लिए, आपका अमूल्य समय खर्च करवा कर माँग रहा हूँ । अगर योग्यता हो मेरी तो दो चार पंक्तियाँ लिखें । इच्छा होते हुए भी प्रत्यक्ष आप के पास आने में असमर्थ हूँ और अब तो यदि मेरा प्रयास प्रामाणिक रहा और इश्वरेच्छा हुई तो "एकाध हफ्ते के लिए" नहीं, सदा के लिए आपके चरणों में आना है – निकट से या दूर से ।

यहाँ थोड़े में ही मृत भाई के विषय में लिखकर मेरी एवं मेरी वृध्ध माता की समाधान-प्राप्ति की अभीप्सा कर, रुकूँगा ।

'दुःख में जो अनुद्विग्न' वाला गीतावचन सदा ही स्मृति में रहा है और भ्रातृप्रेम की आसक्ति से भी भिन्न रहने की कोशिष की है – कर्त्तव्य न भूलते हुए । पर यहाँ एक ऐसे अनुज का जीवन है जो वेदना से मुक्त होने नहीं देता । उसका अल्प जीवन भी सारा एक दूःखपूर्ण कहानी है – कम्युनिस्ट और गरीबों के हमदर्द युवान की, विज्ञान के शोधक एवं साथसाथ शील-साधना के उपासक की, व्यापार द्वारा अपने परिश्रम की कमाई से दुःखियों का दुःख दूर करने का यत्न करनेवाले एक परोपकारी जीवात्मा की ।

वह प्रथम कम्युनिस्ट बना, फिर स्वतंत्र रूप से परोपकार कार्य करने लगा, फिर पारिवारिक प्रत्याघातों के कारण अकेला कलकत्ता चला जाकर विज्ञान के प्रयोगों, व्यापार, शील-साधना और दुःखियों की सेवा के द्वारा अपनी साधना करता रहा – पर उसे आरम्भ से आज तक इतने कष्ट सहने पड़े हैं कि उसका स्मरण करते ही व्यथित हो जाते हैं । हमारे कुटुम्बीजनों के विचार-प्रहार, मित्रों और धनिकों के कष्ट, पुलिस की मार - इन सब के बीच उसका जीवन भयंकर प्रत्याघातों और दुःखों को सहता चला और फिर भी यह छोटा कुमार अचल रहा ... इतना भी पर्याप्त न था, न जाने भगवान की क्या इच्छा थी, उसका अन्त भी बड़ा करूण ही कहा जाय ऐसा बना । इन उपरोक्त प्रत्याघातों एवं कष्टों के कारण ५ महीना पूर्व वह कलकत्ता में बीमार पड़ा - टाइफाइड से । मैं जल्दी वहाँ गया और दो महीने की प्राकृतिक एवं आयुर्वेदिक चिकित्सा तथा नित्य 'मानस' पाठ, रामनाम

एवं प्रभुप्रार्थना से वह मरते मरते बचा । बाद उसे कलकत्ता से हैदराबाद हवाई जहाज से भेजना पड़ा (दुर्बल शरीर के कारण) और मैं गाड़ी से यहाँ लौटा । तीसरे दिन यहाँ पहुँचा और पहुँचते ही देखा तो अज्ञान और पूर्वग्रह वश उसके लिए मेरे द्वारा कलकत्ता में की गई प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति पूर्वग्रह और अज्ञान की दृष्टि के कारण बीमारी से उठे हुए भाई को "सब कुछ" अपथ्ययुक्त खानपान और दूसरी ओर से एलोपॅथी दवाईयाँ और इंजेक्शन देना शुरु हो गया था । मेरे प्रेमपूर्ण विरोध के होते हुए भी आप्तजनों (!) ने मेरी सुनी नहीं, रोकर प्रभुप्रार्थना करने के सिवा फिर मेरी कोई शक्ति शेष नहीं थी । इसी बीच श्री गुरुदयाल मल्लिकजी भी हमारे घर पर पाँच दिन के लिए आए और यह स्थिति देख बड़े दुःखी हुए । एलोपॅथिक दवाईयाँ बढ़ती गईं और तबियत बिगड़ती गई । आखिर अंतिम १२ दिन तो सब से झगड़ा कर, और रोगी भाई की भी दवा न लेने की प्रबल इच्छा के कारण मैंने यहाँ प्राकृतिक चिकित्सालय में डो. वेंकटराव के पास प्रा.चि. शुरु करवाई । इससे रोगी को शांति तो हुई, पर कॅन्सर काफी आगे बढ़ चुका था परंतु इस दवा मुक्ति से उसे और हमें शांति मिलती थी । प्रा.चि. के उपरान्त रोज मानस पाठ, भजन गान, धर्म-चर्चा आदि होता रहता था । इस बीच पू. बालकोबा के पत्र भी आते रहते थे । पर यहाँ भी हमारे अज्ञानी आप्त जनों ने चैन लेने नहीं दिया, एक ऐसी परिस्थिति खड़ी कर उसे फिर एलोपॅथिक अस्पताल पर ले गये और रोगी को बड़ी पीड़ा पहुँचाने वाले उपचार दिए गए । फिर अन्त निकट आता दिखाई दिया — मैं ने ज़ोर से विरोध किया : "अब इसे कम से कम मरने तो शांति से दें ... !" और तब सब उपचार बंध कर, मृत्यु के दो घंटे पूर्व उसे घर पर लाया गया और हम सब सामूहिक रूप से नवकार मंत्र नाम-जाप और भजनगान करते रहे, 'मानस' उसकी छाती पर ही था, इस वातावरण के बीच (गुरुवार, ज्ञानपंचमी के दिन ५-११-५९) दोपहर के २-१५ बजे उसकी आत्मा ने देहत्याग किया । वह स्वयं भगवान् का नामोच्चारण नहीं कर सका, क्योंकि अंतिम २४ घंटे से वह एक निद्रा जैसी बेहोशी की हालत में था । पर होश में था तब सतत ही प्रार्थना और भजनगान करने का आग्रह कर, मुझ से सुना करता था और बारबार भजन सुनकर रो पड़ता था ।

उसके सारे जीवन की बात अगर लिखने बैठूं तो World Classics में शायद स्थान पा सके ऐसी एक करुणान्त कथा सृजित होगी — अगर भगवान की कृपा एवं आप सब के आशीर्वाद रहे तो कभी यह काम हो जाएगा — अनेक ऐसे परोपकारी दुःखी जीवों के हेतू ।

यहाँ आप से थोड़ा कुछ पूछकर पत्र समाप्त कर रहा हूँ ।

(१) ऐसे जीवात्मा का कार्य दूसरे जन्म में फिर चालु रहता होगा ऐसा समझता हूँ । पर इस कार्य के लिए तो फिर मनुष्य जीवन ही चाहिए न ? तो उसे मनुष्य जीवन मिल सकता है ? अगर हाँ, तो उसका यह जीवन इतनी शीघ्र समाप्त क्यों हुआ ? क्या उसके जीवन की समाप्ति में मात्र "नियति" ही कारणभूत है, या ऊपर लिखे अनुसार हम सब आप्तजनों की लापरवाही भी ?

(२) उसका अधूरा कार्य हम शुरु करें तो उस आत्मा को शांति मिल सकती है ? गरीबों की सेवा की एवं शीलसाधना की उसे उत्कट इच्छा रहती थी । मेरी तो अल्प समझ है, उसे इस प्रकार हम सब के कार्य से ही सच्ची शांति मिलेगी ।

(३) उसकी वेदना मुझे तो बारबार विश्ववेदना की ओर अभिमुख कर रही है — अब पूर्ण रूप से विश्व की वेदना में अपने को घुला कर करूणा कार्य में लग जाना चाहता हूँ । M.A. की परीक्षा निकट ही आ रही है पर अब इसमें रुचि नहीं रही, फिर साथ साथ प्रश्न भी होता है कि परीक्षा

छोड़ देना भी उपयुक्त है ? परीक्षा पूरी करने के बाद ही इस कार्य में लग जाना व्यावहारिक तो है, पर इसके सामने शंकराचार्य बारबार कहते दिखाई देते हैं —

"या दिने विवज्या सा दिने प्रवज्या ।"

साथ साथ एक दूसरी बात भी है — मेरी वृध्ध भक्तहृदय माता और मेरे उदार निःस्वार्थी बड़े भाई भी इस दुःख से द्रवित होकर गरीबों के किसी सेवाकार्य में लगना चाहते हैं, और कहीं भी मेरे साथ रहकर ! इसके लिए क्या, कैसे करना यह भी सोचना है — उरुली आश्रम जैसे किसी आश्रम में सेवा दें या अन्य व्यवसाय कर साथ साथ काम करें ?

इन प्रश्नों के बारे में आप हो सके तो थोड़ा-सा प्रकाश डालें । जैसा कि आगे लिखा, प्रत्यक्ष तो अभी आप के पास आ नहीं सकूं ऐसी विवशता है ।

दिवंगत भाई आपके पास आना चाहता था, पर कभी ऐस अवसर ही नहीं आ सका । बीच में पू. बालकोबा के पास वह डेढ़ महीना रहा था और तब से हिंसक मनोवृत्ति से मुक्त होकर परिवर्तित हो गया था । वह बालकोबाजी से प्रभावित हुआ था और बालकोबाजी उससे प्रसन्न । अभी उरुली से उन्होंने लिखा है —

"ચિ. કીર્તિના સ્વર્ગવાસના ખબર સાવ જ અનપેક્ષિત મળ્યા xxx ચિ. કીર્તિ અહિં રહેલો ત્યારે રોજ અમારી જોડે પાયખાના સફાઈ માટે નિયમિત રીતે આવતો અને તે વેળા ૨॥ કલાક અમારું સફાઈનું કામ ચાલતું તેટલું એ પૂરું કરતો. એક વેળા શૌચ કેટલા વધારે સંખ્યામાં કોણ ઉપાડે છે એની હરિફાઈ રાખેલી તેમાં એણે મારા સ્મરણ પ્રમાણે ૪૦૦ શૌચ ઉપાડેલા. એનો બીજો નંબર આવેલો. આશ્રમમાં રહી સેવા કરવાનું એણે મને જણાવેલું, પણ મેં એને કહ્યું હમણાં ભણતર પૂરું કર પછી જોઈ લેવાશે.

એણે કલકત્તામાં પોતાનું શરીર ઘસી નાખ્યું. કીર્તિના જે ગુણો છે તેનું સ્મરણ કરી, તેના વિયોગના દુઃખને સાવ ભૂલવાનો પ્રયત્ન કરશો... મારા તરફથી તેની માતાને સાંત્વના આપશો અને તમે પણ શાંતિ જાળવશો..."

લિ. બાળકોબા ભાવે

अस्तु । मैं ने बहुत ही अधिक लिख दिया है, अब आपसे यथा समय पत्रोत्तर देने की प्रार्थना करने के उपरान्त एक और प्रार्थना कर सकता हूँ — दिवगंत कीर्ति की आत्मा की शांति के हेतू आप क्षणभर परमात्मा से प्रार्थना करेंगे ? आप की प्रार्थना उसे भी पहुँचेगी और हमें भी दिशादर्शन कराएगी ।

आप के भव्य गुणों का मुझे स्पर्श हो इस मनीषा के साथ —

नम्रता का अमीप्सु प्रताप के प्रणाम ।

(बाबा विनोबाजी का संक्षिप्त पर मर्मयुक्त पत्रोत्तर)

"परतापराय, पत्र मिला । छोटे भाओी की करुण कहानी पढ़ी । उसमें से आध्यात्मिक सवाल तुम्हें सुझे, उसकी चर्चा पत्र में नहीं करना चाहता । कभी मिलोगे तब चर्चा हो सकेगी । जानेवाला गया, पीछे रहनेवालों को अपना कर्तव्य करना होता है ।" — वीनोबा

इन सभी महत्पुरुषों के उपरान्त स्वजनों, साथियों, मित्रों के अश्रुप्रवाहभरे प्रतिभाव पत्र तो लगातार आते रहे ।

बड़ों और छोटों — सभी का इतना प्रेम पानेवाले इस युवा करुणात्मा क्रान्तिकार के लोहचुंबकमय जीवन का रहस्य क्या था ? उसकी निराली कही गई-मानी गई दास्तान क्या थी ?

इस प्रारंभिक दर्शन के पश्चात् अगले प्रकरण में देखेंगे उसके इस चुंबकीय, प्रेरक जीवन का, संक्षेप में भी सही, आद्यान्त दर्शन ।

(क्रमशः)